अपना चरित्र-निर्माण आप कीजिए

लेखक
श्यामचन्द्र कपूर

प्रकाशक
आर्य बुक डिपो
३०, नाईवाला, करौलबाग, नई दिल्ली-५

एक बात

जीवन में चरित्र ही सबसे बड़ी शक्ति है। चरित्र ही मनुष्य की, समाज की और देश की सबसे बड़ी शक्ति है। यदि हम देशों की दौड़ में पिछड़ना नहीं चाहते, तो हमें सदाचार का पल्ला पकड़ना होगा। हमें अपना चरित्र सुधारना-सँवारना होगा।

जिस समाज के लोगों का चरित्र ऊँचा होगा, वही अपनी उन्नति और अपना विकास कर सकता है। भ्रष्टाचार मनुष्य को, उसके परिवार को और देश को भी ले डूबता है। आज हमें कमजोरियों का डटकर मुकाबला करना है और अपने चरित्र को महान् पुरुषों का अनुकरण करते हुए ऊँचा और निर्मल बनाना है। इस छोटी-सी पुस्तक में यही बताया गया है कि हम अपना चरित्र-निर्माण कैसे कर सकते हैं। जिन विद्वानों की पुस्तकों के विचार इसकी रचना में लिए गए हैं, उनके प्रति लेखक हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है।

—श्याम कपूर

कहाँ क्या है ?

१. चरित्र क्या है ?	……	१
२. अपने स्वामी आप बन जाइए	……	९
३. नियम पालन कीजिए	……	१८
४. साहस से काम लीजिए	……	३३
५. साहस की परख	……	३९
६. प्रसन्न-चित्त बन जाइए	……	४५
७. इन्द्रियों को वश में कीजिए	……	४९
८. हाथी और अंकुश	……	५६
९. दान कीजिए	……	६५
१०. सहन शीलता की किलेबन्दी	……	७५
११. सरल स्वभाव	……	७९
१२. दुर्बल को न सताइए	……	८२
१३. मूल्य दीजिए	……	८६
१४. सच बोलिए लेकिन…	……	९०
१५. भय को दूर भगाइए	……	९५
१६. मन की पवित्रता	……	१००
१७. अच्छा बर्ताव कीजिए	……	१०४
१८. स्थिर-चित्त बनिए	……	१०८
१९. आदर्श चरित्र का उदाहरण	……	११३
२०. चरित्र की परीक्षा	……	११७
२१. ईमानदारी की परीक्षा	……	११९
२२. श्रम का सम्मान	……	१२३
२३. सहयोग या सहकारिता	……	१२८
२४. देशभक्ति	……	१३२
२५. कुछ सूक्तियाँ	……	१३४

: १ :

चरित्र क्या है ?

कोई मनुष्य अच्छा व्यवहार करता है, ईमानदार है, सच्चा है, हम कहते हैं कि वह अच्छा आदमी है। या हम कहते है कि उसका चरित्र अच्छा है। यही नहीं, ऐसे मनुष्य को हम पसन्द करते है। उसके पास बैठने में, उससे बात करने में हमें आनन्द मिलता है। सैकड़ों लोगों की भीड़ में हमारी नजर उस पर चली जाती है। हमें वह अच्छा लगता है।

इससे यह पता चलता है कि चरित्र का धन कोई साधारण धन नहीं है। मन के बहुत से गुणों का नाम चरित्र है। जिस मनुष्य में जितने अधिक गुण होंगे, वह उतना ही चरित्र का धनी होगा।

नम्रता, सहनशीलता, साहस, काम में लगन, आत्मसम्मान, आत्मविश्वास, विश्वासपात्रता, दयालुता,



ईमानदारी, दृढ़ निश्चय, लगातार काम करना, सत्यता—इत्यादि अनेकों उत्तम गुण हैं, जिनके मेल से मनुष्य का चरित्र बनता है।

इनमें से एक ही गुण को पूरी तरह धारण करने से मनुष्य जीवन सफल हो जाता है। ध्रुव ने दृढ़ निश्चय के कारण ही अमर कीर्ति प्राप्त की।

यह तो हम सब जानते हैं कि मनुष्य के पास पशु की अपेक्षा श्रेष्ठ बुद्धि होती है। इसलिए मनुष्य बहुत कुछ सीख सकता है। पशुओं को भी कुछ काम सिखलाये जाते हैं, पर उनमें सोचने की स्वतन्त्र बुद्धि नहीं होती। मनुष्य के पास स्वतन्त्र बुद्धि होती है। वह सोचकर, पढ़कर, देखकर और दूसरों की नकल करके बहुत-सी बातें सीख लेता है। अपने समाज में वह जो कुछ देखता है, उसे समझने की कोशिश करता है। इसके सिवा माता-पिता या बड़े भाई-बहन भी उसे बहुत-सी बातें सिखला देते हैं। गुरु या अध्यापक से भी वह बहुत-सी बातें सीख लेता है। चरित्र के बारे में भी वह बहुत-सो बातें माता, पिता, गुरु, पड़ोसी या

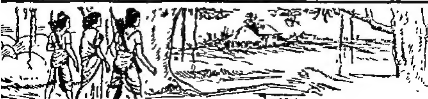


संगी-साथी से सीखता है। माता, पिता, गुरु, पड़ौसी और अपने से वड़े का सम्मान करना भी श्रेष्ठ चरित्र का चिह्न है। माता-पिता की सेवा के कारण ही श्रवणकुमार का चरित्र आदर्श माना जाता है।

चरित्र निर्माण का सबसे अच्छा समय वचपन का समय है। जिस तरह कोरे वर्तन पर जो फूल आदि बनाये जाएँ, पकने पर वे पक्के हो जाते हैं, इसी तरह सदाचार के विषय में वालक को जो बातें बताई या सिखाई जाएँ, वे उसके मन पर पक्की हो जाती हैं।

वचपन से ही राम-लक्ष्मण को माता-पिता की आज्ञा-पालन करना सिखलाया गया था। इसीलिए पिता की आज्ञा को जानकर ही वे प्रसन्नता के साथ वन में चले गए थे।

कुछ वरस पहले मध्य प्रदेश में, पांच-छः वर्ष के दो मानव वच्चे जंगल से वचाकर लाये गये। वे वहाँ भेड़ियों के वीच में रहते थे। उन दोनों को एक अच्छे गृहस्थ के घर में रखा गया। वह गृहस्थ बड़े सज्जन थे।



उन्होंने तथा उनकी धर्मपत्नी ने उन दोनों बच्चों को मनुष्य-जैसी आदतें सिखलाने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु सफलता न मिली। दोनों बालक कपड़े न पहनते थे। यदि उन्हें पहनाये जाते तो वे उन्हें फाड़ देते थे। वे चौपायों की तरह चलते थे। कच्चा मांस खाना पसन्द करते थे। कुत्ते, बिल्ली आदि के साथ रहना उन्हें अच्छा लगता था। उन्हें मनुष्य की तरह बोलना सिखलाने का प्रयत्न किया गया; पर वे न सीख सके। वे मनुष्य जैसा जीवन बिताना न सीख सके।

इससे यह पता चलता है कि बालक को कुछ भी सिखलाने का सबसे अच्छा समय वही होता है, जब कि वह अभी नन्हा बच्चा होता है। इससे दूसरी बात यह पता चलती है कि बचपन में संगति का बड़ा प्रभाव होता है। बच्चा जैसी संगति में रहता है, वैसी ही बातें और हरकतें सीखता है।

बालक में चरित्र का निर्माण बहुत ही छोटी आयु में शुरू हो जाना चाहिए और यह काम करना माता-



पिता की जिम्मेदारी है। अध्यापक या गुरु का काम माता-पिता के बाद शुरू होता है। बाल अवस्था में अच्छी आदतें सीखना आसान होता है। ये अच्छी आदतें जीवन भर काम आती है। माता-पिता की लापरवाही से बच्चे बुरी संगत में पड़कर बुरी आदतें सीखने लगते है, जिनके कारण फिर उन्हें जीवन-भर पछताना पड़ता है।

बच्चे के चरित्र-निर्माण के लिए माता-पिता को बड़ा प्रयत्न करना पड़ता है। उन्हें बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। उन्हें कई बार काफी कष्ट उठाना पड़ता है और सबसे बड़ी बात यह है कि उन्हें उन गुणों को अपने अन्दर धारण करना पड़ता है। उन्हें स्वयं आदर्श बनना पड़ता है। बच्चों को माँ-बाप कमजोरियों से, बुराइयों से और बुरे चाल-चलन से तभी बचा सकते हैं जबकि उनके अपने अन्दर वे कमियाँ न हों। गुरु का सम्मान करने से तथा उनकी आज्ञा मानने से विद्या प्राप्त होती है। अर्जुन ने इसी प्रकार गुरु से धनुर्विद्या प्राप्त की थी।



चरित्र मनुष्य के जीवन की नींव है। चरित्र के गुण शब्दों में नहीं, बल्कि व्यवहार में प्रकट होते हैं। दिखावट-बनावट से मनुष्य थोड़ी देर किसी को भले ही धोखा दे ले; परन्तु देर तक धोखा नहीं दिया जा सकता। लोग चरित्रवान व्यक्ति की बात का विश्वास करते हैं। उसे काम का आदमी समझा जाता है। उसे हितकारी माना जाता है। वह दूसरों को धोखा नहीं देता। वह किसी को नीचे गिराने की कोशिश नहीं करता। वह उस बात का प्रण नहीं करता, जिसे वह पूरी न कर सके।

श्रीकृष्ण ने गीता में अर्जुन को यही उपदेश दिया है कि अपने निश्चय पर दृढ़ रहना चाहिए।

चरित्रवान मनुष्य बहुत अधिक चतुर बनने का यत्न नहीं करता। लोग बहुत ज्यादा चालाक आदमी को भी पसन्द नहीं करते। इससे तो सच्चे-सीधे आदमी को लोग अधिक चाहते हैं। चरित्रवान अपने कामों की बड़ाई करके दूसरों को नीचा दिखाने का प्रयत्न नहीं करता। वह धैर्यवान होता है। वह



सहनशील होता है। वह दूसरों के मत को धीरज से सुनता है। चाहे उसे दूसरे का मत ठीक न लगता हो, फिर भी सुनने का धीरज चरित्रवान में होता है। वह यदि किसी को उसकी भूल बतलाता है तो बड़ी नर्मी से, तरीके से और उसके सुधार के लिए ही बतलाता है। चरित्रवान किसी का उत्साह भंग नहीं करता; वह किसी का दिल नहीं तोड़ता। वह हरएक को नेक काम करने की सलाह देता है। वह हरएक को उत्साह देने के लिए सदा तैयार रहता है। वह स्वयं हिम्मत नहीं हारता, और इसी तरह दूसरों को भी हिम्मत बँधाता रहता है। चरित्रवान मनुष्य सम्पत्ति और विपत्ति—दोनों में एक समान ही मित्र रहता है। विपत्ति के दिनों में वह सगे-सम्बन्धियों या मित्रों को धोखा नहीं देता।

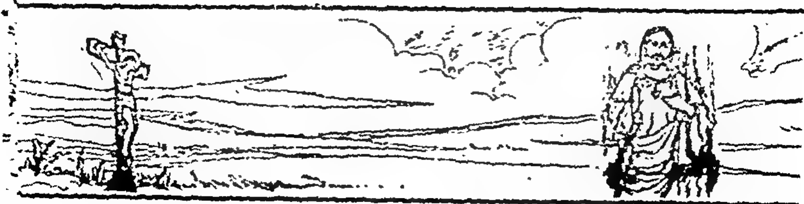
मित्रता निभाना भी चरित्र की निशानी है। ऐसी ही मित्रता श्रीकृष्ण ने सुदामा के प्रति निभाई थी।

न्याय या इन्साफ भी चरित्र का अंग है। न्याय करते समय मनुष्य को पूरी तरह निष्पक्ष रहना



चाहिए। न्याय के समय न कोई किसी का मित्र होता है, न शत्रु। इतिहास में न्याय के कारण विक्रमादित्य नौशेरवाँ, जहाँगीर और शिवाजी के नाम बड़े प्रसिद्ध हैं।

चरित्र क्या है—इसे हम सब अपने मन में समझते हैं। चाहे हम इसका पूरी तरह वर्णन न कर सकें, फिर भी हम चरित्रवान मनुष्य को पसन्द करते हैं, इसमें सन्देह नहीं।



: २ :

अपने स्वामी आप बन जाइए

चरित्र-निर्माण के लिए यह सबसे पहली बात है। दुनिया में ऐसा आदमी मुश्किल से मिलता है, जो अपना स्वामी आप हो।

बात देखने में मामूली लगती है; परन्तु इतनी मामूली है नहीं। लोभ सामने आने पर अपनी इन्द्रियों को और मन को वश में रखना कठिन हो जाता है। जो ऐसे समय में भी अपने मन को वश में रख सकता है, वह संसार का कौन-सा बड़ा काम नहीं कर सकता!

क्रोध का मौका आने पर भी जो मन को वश में रखता है; वह देवता नहीं तो क्या है? अभिमान का कारण होने पर भी जो नम्रता से बात करता है, वह दूसरों के मन को जीत लेता है।



मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र की सेवा और रक्षा की भावना ऊँचे मन की निशानी है। सिद्धार्थ ने दया-भावना के कारण ही हंस को देवदत्त से बचाया था।

क्षमा की भावना बड़ी अच्छी बात है। क्षमा की भावना वाले मनुष्य का हृदय एक विशाल भवन के समान होता है, जिसमें बहुत से लोग समा सकते हैं। छोटी-सी बात पर वह बदला लेने के लिए तैयार नहीं हो जाता। वह शान्त रहता है। उसका हृदय साफ, सुन्दर और संगीत से भरा होता है। जरा-सी बात से वह बेसुरा नहीं हो जाता।

वीरता उत्तम गुण है। पर कई बार हम क्रोध को ही वीरता समझ बैठते हैं। कुछ लोग अपने से दुर्बल पर या पशु-पक्षियों पर निर्दयता को ही वीरता समझते हैं; परन्तु यह हमारी भूल है।

महात्मा बुद्ध के उपदेशों का सार तीन शब्दों में कहा जा सकता है—आत्म-संयम, सत्य और अहिंसा।

यशोधरा के स्वयंवर में देवदत्त की सिद्धार्थ से



हार हुई थी। जब सिद्धार्थ ने बुद्ध का पद प्राप्त कर लिया और चारों ओर उनका यश फैल गया, तो देवदत्त बुरी तरह जलभुन गया। उसनेसोलह धनुपधारियों को बुद्ध का वध करने के लिए नियुक्त किया। परन्तु धनुप-धारियों ने जब बुद्ध का शान्त, सौम्य और तेजस्वी मुखमण्डल देखा तो उन्हें बाण चलाने का साहस ही न हुआ। यह है चरित्र का बल !

एक बार देवदत्त ने बुद्ध को मारने के लिए एक मतवाला हाथी छोड़ा। जब वह बुद्ध के पास पहुँचा तो बुद्ध उसे प्यार करने लगे। वह हाथी भी बुद्ध को मारने की अपेक्षा उन्हें प्यार करने लगा।

महात्मा बुद्ध के शिष्यों ने बताया कि वह मतवाला हाथी देवदत्त द्वारा छोड़ा गया है और वह आप की हत्या करना चाहता है। तब बुद्ध ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—"देवदत्त का अज्ञान शीघ्र ही मिट जाएगा।"

क्रोध का कारण होने पर भी जो क्रुद्ध नहीं होता, उसका चरित्र ऊँचा है। काम-वासना का कारण



मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र की सेवा और रक्षा की भावना ऊँचे मन की निशानी है। सिद्धार्थ ने दया-भावना के कारण ही हंस को देवदत्त से बचाया था।

क्षमा की भावना बड़ी अच्छी बात है। क्षमा की भावना वाले मनुष्य का हृदय एक विशाल भवन के समान होता है, जिसमें बहुत से लोग समा सकते हैं। छोटी-सी बात पर वह बदला लेने के लिए तैयार नहीं हो जाता। वह शान्त रहता है। उसका हृदय साफ, सुन्दर और संगीत से भरा होता है। जरा-सी बात से वह बेसुरा नहीं हो जाता।

वीरता उत्तम गुण है। पर कई बार हम क्रोध को ही वीरता समझ बैठते हैं। कुछ लोग अपने से दुर्बल पर या पशु-पक्षियों पर निर्दयता को ही वीरता समझते हैं; परन्तु यह हमारी भूल है।

महात्मा बुद्ध के उपदेशों का सार तीन शब्दों में कहा जा सकता है—आत्म-संयम, सत्य और अहिंसा।

यशोधरा के स्वयंवर में देवदत्त की सिद्धार्थ से

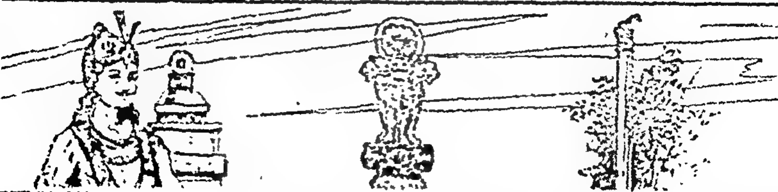


उपस्थित होने पर भी जो अपने मन को वश में रखता है, वह अपना स्वामी आप है।

महात्मा ईसा में क्रोध का नाम-निशान न था। इसीलिए वे महान् थे। उन्होंने ही कहा था—"जो तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारे, दूसरा उसके आगे कर दो।"

क्रोध का सबसे भीषण परिणाम युद्ध है। कलिंग-युद्ध के बाद अशोक को बड़ा पछतावा हुआ था और उसने जीवन-भर क्रोध और हिंसा न करने का निश्चय कर लिया था।

सन् १९०४ की घटना है। उस समय रूस और जापान में युद्ध छिड़ा हुआ था। रूस का जहाजी बेड़ा पश्चिमी योरुप के समुद्र तट से होकर एशिया के समुद्र की ओर जा रहा था। रात के समय रूसी जहाजों का प्रकाश समुद्र की लहरों को प्रकाशित कर रहा था। रूसी जहाजों के पहरेदारों ने सामने से आते कुछ छोटे-छोटे जहाज देखे। उन्होंने उन छोटे जहाजों को जापानियों की पनडुब्बियाँ समझा। उन्हें



निश्चय हो गया कि शत्रु उनके जहाजों को टारपीडो करना चाहता है। रूसी सेनापति क्रोध में भर गया। उसने बिना पूरा पता किये, तोपों से उन जहाजों पर गोला-बारी करने की आज्ञा दे दी। इस गोलाबारी से उन छोटे जहाजों पर सवार दो मनुष्य मारे गये और बहुत से घायल हुए। पर वे छोटे जहाज जापानी जहाज न थे। वे तो मछुओं के जहाज थे, जो मछली मारने के लिए समुद्र में तैर रहे थे।

पाँच देशों के जलसेनाध्यक्षों का एक कमीशन इस घटना का निर्णय करने के लिए नियुक्त हुआ। इसमें एक सदस्य रूस का था, दूसरा इंग्लैंड का, तीसरा फ्रांस का, चौथा आस्ट्रेलिया का और पांचवां अमेरिका का। दोनों पक्षों की सुनवाई के बाद न्यायाधीशों ने निर्णय दिया कि रूस दोषी है और वह ६५००० पौंड मुआवजे के रूप में उन मछुओं के परिवारों को दे, जिनके आदमी गोला-बारी के कारण मारे गये है या घायल हुए हैं।

इस तरह एक व्यक्ति के क्रोध के कारण उसके



देश को अपराधी बनना पड़ा और ६५००० पौंड का दंड भुगतना पड़ा।

पन्ना धाय का पुत्र बनवीर के क्रोध का शिकार हो गया था, यद्यपि उस बेचारे का कोई अपराध न था। क्रोध बड़ा चंडाल होता है।

तीस वर्ष की आयु का एक ब्रह्मचारी बालक बड़ा चतुर था और उसे अपनी चतुरता का बड़ा अभिमान था। वह विदेश यात्रा करने घर से निकला। एक देश में धनुष बाण बनाने की विद्या उसने सीखी। दूसरे देश में उसने जलयान बनाना सीख लिया। तीसरे देश में उसने भवन-निर्माण की कला सीखी। इसी तरह वह सोलह देशों में गया और सोलह प्रकार की कलाएँ सीख कर वह 'सोलह कला सम्पूर्ण' बन गया। जब वह भारत में आया, तो प्रत्येक से अभिमान भरी बातें करता था। वह कहता था—"आज संसार में मुझ-सा बुद्धिमान और चतुर अन्य कौन है ?" महात्मा बुद्ध ने सोचा कि यह नवयुवक तो योग्य है; परन्तु इसके अभिमान आदि दोषों को दूर करना



चाहिए। तभी यह हितकारी काम कर सकेगा। भगवान बुद्ध भिक्षा-पात्र लेकर उसके सामने गये। नवयुवक ने पूछा–"तुम कौन हो ?" भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया–"मैं एक मनुष्य हूँ, ऐसा मनुष्य जो अपने को वश में रख सकता है।"

नवयुवक ने पूछा—"इसका क्या अर्थ है ?"

महात्मा बुद्ध ने उत्तर दिया—"धनुष बनाने वाला धनुष बनाता है और जलयान का चालक जलयान को वश में रखता है; भवन-निर्माण करने वाला ऊँचे भवन खड़े करता है, और बुद्धिमान अपने आप को वश में रखता है।"

नवयुवक ने पूछा—"कैसे ?"

भगवान् ने उत्तर दिया—"यदि लोग उसकी प्रशंसा करें तो उसका मन शान्त रहता है; यदि लोग उसकी निन्दा करें तो भी उसका मन शान्त रहता है। वह सद्व्यवहार के श्रेष्ठ नियम का आदर करता है और सदा शान्त रहता है।"

बाबर ने गुरु नानक को बुलाकर बड़े कठोर



देश को अपराधी बनना पड़ा और ६५००० पौंड का दंड भुगतना पड़ा।

पन्ना धाय का पुत्र वनवीर के क्रोध का शिकार हो गया था, यद्यपि उस वेचारे का कोई अपराध न था। क्रोध वड़ा चंडाल होता है।

तीस वर्ष की आयु का एक ब्रह्मचारी बालक वड़ा चतुर था और उसे अपनी चतुरता का वड़ा अभिमान था। वह विदेश यात्रा करने घर से निकला। एक देश में धनुष बाण वनाने की विद्या उसने सीखी। दूसरे देश में उसने जलयान वनाना सीख लिया। तीसरे देश में उसने भवन-निर्माण की कला सीखी। इसी तरह वह सोलह देशों में गया और सोलह प्रकार की कलाएँ सीख कर वह 'सोलह कला सम्पूर्ण' बन गया। जब वह भारत में आया, तो प्रत्येक से अभिमान भरी बातें करता था। वह कहता था—"आज संसार में मुझ-सा वुद्धिमान और चतुर अन्य कौन है?" महात्मा बुद्ध ने सोचा कि यह नवयुवक तो योग्य है; परन्तु इसके अभिमान आदि दोषों को दूर करना



चाहिए। तभी यह हितकारी काम कर सकेगा। भगवान बुद्ध भिक्षा-पात्र लेकर उसके सामने गये। नवयुवक ने पूछा—"तुम कौन हो ?" भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया—"मैं एक मनुष्य हूँ, ऐसा मनुष्य जो अपने को वश में रख सकता है।"

नवयुवक ने पूछा—"इसका क्या अर्थ है ?"

महात्मा बुद्ध ने उत्तर दिया—"धनुप बनाने वाला धनुप बनाता है और जलयान का चालक जलयान को वश में रखता है; भवन-निर्माण करने वाला ऊँचे भवन खड़े करता है, और बुद्धिमान अपने आप को वश में रखता है।"

नवयुवक ने पूछा—"कैसे ?"

भगवान् ने उत्तर दिया—"यदि लोग उसकी प्रशंसा करें तो उसका मन शान्त रहता है; यदि लोग उसकी निन्दा करें तो भी उसका मन शान्त रहता है। वह सद्व्यवहार के श्रेष्ठ नियम का आदर करता है और सदा शान्त रहता है।"

बाबर ने गुरु नानक को बुलाकर बड़े कठोर



देश को अपराधी बनना पड़ा और ६५००० पौंड का दंड भुगतना पड़ा ।

पन्ना धाय का पुत्र बनवीर के क्रोध का शिकार हो गया था, यद्यपि उस वेचारे का कोई अपराध न था । क्रोध वड़ा चंडाल होता है ।

तीस वर्ष की आयु का एक ब्रह्मचारी बालक बड़ा चतुर था और उसे अपनी चतुरता का वड़ा अभिमान था । वह विदेश यात्रा करने घर से निकला । एक देश में धनुष बाण बनाने की विद्या उसने सीखी । दूसरे देश में उसने जलयान बनाना सीख लिया । तीसरे देश में उसने भवन-निर्माण की कला सीखी । इसी तरह वह सोलह देशों में गया और सोलह प्रकार की कलाएँ सीख कर वह 'सोलह कला सम्पूर्ण' बन गया । जब वह भारत में आया, तो प्रत्येक से अभिमान भरी बातें करता था । वह कहता था—"आज संसार में मुझ-सा बुद्धिमान और चतुर अन्य कौन है ?" महात्मा बुद्ध ने सोचा कि यह नवयुवक तो योग्य है; परन्तु इसके अभिमान आदि दोषों को दूर करना



चाहिए। तभी यह हितकारी काम कर सकेगा। भगवान बुद्ध भिक्षा-पात्र लेकर उसके सामने गये। नवयुवक ने पूछा—"तुम कौन हो ?" भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया—"मै एक मनुष्य हूँ, ऐसा मनुष्य जो अपने को वश में रख सकता है।"

नवयुवक ने पूछा—"इसका क्या अर्थ है ?"

महात्मा बुद्ध ने उत्तर दिया—"धनुष बनाने वाला धनुष बनाता है और जलयान का चालक जलयान को वश में रखता है; भवन-निर्माण करने वाला ऊँचे भवन खड़े करता है, और बुद्धिमान अपने आप को वश में रखता है।"

नवयुवक ने पूछा—"कैसे ?"

भगवान् ने उत्तर दिया—"यदि लोग उसकी प्रशंसा करें तो उसका मन शान्त रहता है; यदि लोग उसकी निन्दा करें तो भी उसका मन शान्त रहता है। वह सद्व्यवहार के श्रेष्ठ नियम का आदर करता है और सदा शान्त रहता है।"

बाबर ने गुरु नानक को बुलाकर बड़े कठोर



वचन कहे; परन्तु जब गुरु नानक शान्त-भाव से मुस्कराते रहे तो बाबर की आँखें खुल गईं। उसे पता चल गया कि नानक महान् मनुष्य हैं।

अपनी इन्द्रियों को वश में रखना, अपने शरीर को वश में रखना, अपने मन को वश में रखना एक कठिन कार्य है; परन्तु इसके बिना संसार का प्रत्येक कार्य कठिन है। अपने आपको वश में किये बिना मनुष्य किसी भी काम पर काबू नहीं पा सकता, किसी भी कार्य में सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। चरित्रवान वही रह सकता है जो मन को वश में रख सकता है। मन को वश में करने से मनुष्य लोभ, क्रोध, भय आदि से बच सकता है। वह कोई ऐसा काम नहीं करता जिससे कि पीछे पछाताना पड़े।

यदि चरित्र-निर्माण करना है, तो मन को वश में रखने का अभ्यास कीजिए। अभ्यास से मन को वश में करने का ढंग आ जाता है।

चरित्र-निर्माण में जिस एक सबसे बड़े गुण की आवश्यकता है, वह है मन का निग्रह। 'मन के हारे



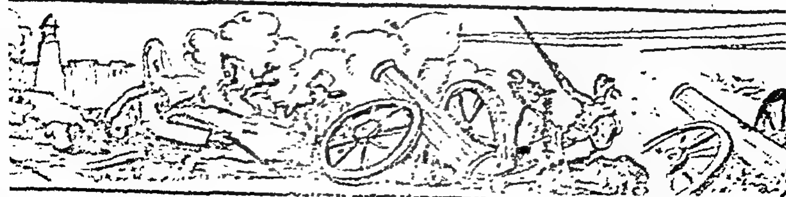
हार है, मन के जीते जीत।' जिसने अपने मन को वश में कर लिया, इन्द्रियाँ उसके वश में अपने-आप हो जाती हैं। जो व्यक्ति आवेश, जोश और अपनी आदतों पर विजय नहीं प्राप्त कर सकता, वह किसी दूसरे मनुष्य पर विजय कैसे प्राप्त कर सकता है? वह किसी बड़े काम को कैसे कर सकता है? वह महान् कैसे बन सकता है?



: ३ :

नियम पालन कीजिए

सारा विश्व नियमों के अधीन चल रहा है। सारा ब्रह्माण्ड ईश्वरीय नियमों से चल रहा है। प्रकृति के अपने नियम हैं, जिनके अनुसार प्राकृतिक परिवर्तन होते रहते हैं। उन नियमों की खोज करना और उनका पालन करना मनुष्य के लिए आवश्यक है। जो मनुष्य नियम और क्रम का जितना अधिक पालन करता है, वह उतना ही ऊँचा उठ जाता है। सूर्य, चन्द्र, ग्रह और तारे नियम और क्रम में बँधे हैं। वे अपनी-अपनी परिधि में घूमते रहते हैं। नक्षत्र-विद्या को जानने वालों ने उन नियमों का ज्ञान प्राप्त किया है। वे पहले ही बतला देते हैं कि किस दिन किस समय सूर्योदय होगा और किस दिन या किस रात को किस समय सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण होगा। कर्म-



योगी अपने नियम का पालन करता है। नियम पालन में वह सुस्ती नहीं करता। नियम का पालन न करने वाला अपना सम्मान खो बैठता है। नियम का पालन करने वाला ही बुद्धिमान है।

गणित विद्या के अपने नियम और क्रम हैं। एक-दो-तीन-चार-पाँच-छः-सात-आठ-नौ-दस — इसी क्रम से हमें गणना करनी होती है—एक तीन छः चार आदि अशुद्ध होगा। गुणन, भाग और जोड़ आदि में नियमों का पालन किये बिना हम गणित नहीं सीख सकते।

संगीत के अपने नियम और क्रम है। सात स्वरों के लिए निश्चित स रे ग म प ध नि—के क्रम को सीखे बिना हमें संगीत विद्या नहीं आ सकती।

काव्यकला, चित्रकला, भवन-निर्माण कला, मूर्त्ति-कला आदि के अपने नियम हैं। इन कलाओं को सीखने के लिए उन नियमों को जानना और उनका पालन करना आवश्यक है।

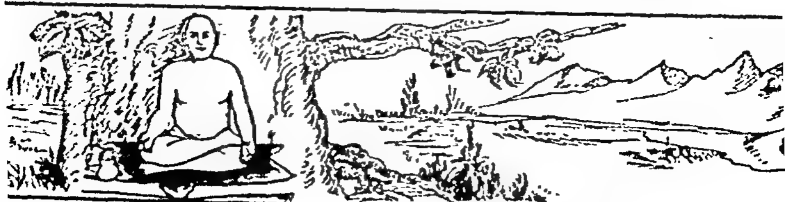
घर को ठीक रखने के अपने नियम हैं। विद्यालय



के अपने नियम हैं। स्कूल के समय-विभाग में प्रत्येक विषय के लिए समय निश्चित होता है। इससे अध्ययन सुगम हो जाता है। यदि प्रत्येक विषय के लिए अलग-अलग घंटे निश्चित न हों, तो कुछ भी पढ़ाई न हो सके। सड़क और बाजार के अपने नियम हैं। यहाँ तक कि मनुष्य के हरएक काम और व्यवहार के नियम हैं। इन नियमों को जानने में अनेक मनुष्यों को बड़ा भारी परिश्रम करना पड़ा है। अब आप ही सोचिए कि इन नियमों का ज्ञान प्राप्त किए बिना और इनका पालन किए बिना मनुष्य का जीवन ऊँचा कैसे उठ सकता है ? उन्नति करना तो दूर, जीवन चल ही नहीं सकता।

यदि किसी घर की बैठक में बर्तन रखे हुए हों और रसोईघर में कुर्सियाँ, मेज और पलंग रखे हुए हों, तो आप उस घर को सुव्यवस्थित कैसे कह सकते हैं ?

चतुर विद्यार्थी स्कूल से बाहर का अपना कार्यक्रम तय करके अपने तन मन का विकास करता है।



परन्तु मूढ़ विद्यार्थी कोई नियम नहीं बनाता और अपना समय वृथा गँवा देता है।

मनुष्य के जीवन में भी नियम और क्रम का पालन आवश्यक है। प्रभात के समय मनुष्य सो कर उठता है। फिर शरीर की सफ़ाई करता है। फिर प्रार्थना आदि करके जलपान करता है और अपने काम में लग जाता है। रात होने पर वह सोता है। इस साधारण नियम और क्रम को तोड़ने पर मनुष्य की विचित्र दशा हो जाती है। यदि एक मनुष्य काम न करे, तो उसकी क्या दशा होगी? यदि एक मनुष्य निरन्तर काम ही करता रहे और उसे कई रात सोने न दिया जाए तो उसकी कैसी दुर्दशा होगी?

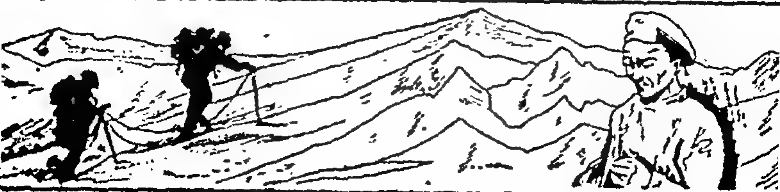
खानपान के सम्बन्ध में भी नियम और क्रम हैं। इन नियमों को तोड़ने से मनुष्य रोगी हो जाता है। खाने के थोड़ी देर बाद फिर खाना, भूख से अधिक खाना, एक-दूसरे के विरुद्ध गुणों वाली चीजें खाना— ये सब बातें स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती हैं। बीमार होने पर भी कई तरह के नियमों का पालन



करना आवश्यक होता है। उन नियमों पर न चलने से बड़ी हानि होती है।

कपड़े पहनने के भी अपने नियम हैं। यदि कोई मनुष्य पैरों में टोपी पहन ले तो आप उसकी बुद्धि पर हँसेंगे।

नियमों के पालन का नाम ही अनुशासन है। अनुशासन के बिना एक सेना का काम कैसे चल सकता है? मान लीजिए कि एक सेना के सैनिक एक बार तो अपने सेनापति की आज्ञा का पालन करते हैं और दूसरी बार उसकी आज्ञा का पालन नहीं करते। तो क्या ऐसी सेना पर कोई देश भरोसा कर सकता है? मान लीजिए, बिगुल बजने पर कुछ सैनिक उठकर बाहर आ जाते हैं और कुछ नहीं आते; या वर्दी पहनने की आज्ञा मिलने पर कुछ सैनिक तो वर्दी पहनते हैं और कुछ नहीं पहनते; अथवा शस्त्र चलाने की आज्ञा होने पर कुछ सैनिक तो शस्त्र चलाते हैं और कुछ नहीं चलाते। ऐसी सेना देश के किस काम आ सकती है? क्या ऐसे



सैनिक अपनी सेना पर गर्व कर सकते हैं ? मान लीजिए कि सेनापति एक आज्ञा देता है और कप्तान उससे भिन्न आज्ञा देता है तो क्या वह सेना अपनी भी रक्षा कर सकती है ?

इसी प्रकार सड़क पर चलने के नियम हैं। 'अपने बायें हाथ चलो।' 'सड़क पार करने से पहले दायें-बायें देख लो। यदि कोई गाड़ी आ रही है तो रुक जाओ।' 'सामने लाल बत्ती हो तो साइकिल, मोटर आदि आगे मत बढ़ाओ।' इन नियमों का पालन न करने से ही दुर्घटनायें होती है। जरा सी असावधानी से ही मनुष्य दूसरे के या अपने ही प्राणों को खतरे में डाल देता है। जरा-सी लापरवाही से कीमती जानें नष्ट हो जाती हैं।

प्रत्येक देश की सरकार के अपने नियम है, अपने कानून हैं, अपना अनुशासन है। उन नियमों का पालन सभी नागरिकों को करना पड़ता है। सम्राट, राजा या राष्ट्रपति देश का सबसे ऊँचा व्यक्ति माना जाता है, परन्तु उसे भी नियम और क्रम के अनुसार



सब काम करने पड़ते हैं। नियमों का तथा अनुशासन का पालन उसे भी करना पड़ता है।

घड़ी, रेल का इंजन, वायुयान का इंजन, मोटर का इंजन, सिलाई की मशीन, रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, तार, विजली—इनके अपने नियम हैं, क्रम हैं।

यह एक सच्चाई है कि नियम और क्रम का पालन न करने के कारण ही सभी दुर्घटनायें होती हैं। जिसे हम 'भाग्य' कह देते हैं, वह असल में नियम-भंग होता है।

सभी वस्तुओं और व्यवहारों के नियम और क्रम का ज्ञान प्राप्त करना मनुष्य के लिए आवश्यक है। शिक्षा के द्वारा हमें इन नियमों का ज्ञान प्राप्त होता है। परन्तु नियमों का जानना ही काफी नहीं, उनका पालन भी करना पड़ता है।

शुरू शुरू में इन नियमों की जानकारी प्राप्त करना या इनके अनुसार काम और व्यवहार करना भले ही हमें कठिन मालूम हो; परन्तु इन नियमों की जानकारी पाए विना और इनका पालन किए



विना हमारा जीवन चल ही नहीं सकता। एक वार नियमों की जानकारी अच्छी तरह हो जाने पर हमारे लिए इन नियमों के अनुसार चलना आसान हो जाता है और हमारी जीवनयात्रा निष्कंटक हो जाती है।

यदि हमें इन नियमों की जानकारी नहीं, तो यह हमारा ही दोष है। नियम-भंग के परिणाम से हम यह कहकर वच नहीं सकते, "ओह ! हमें तो मालूम न था।"

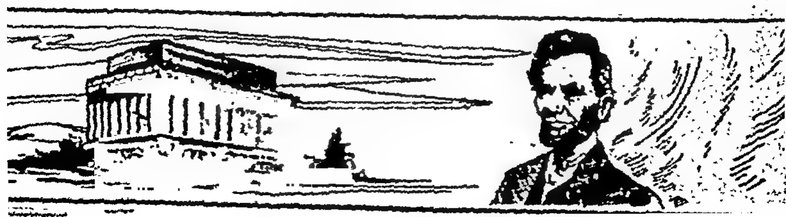
जहाँ तनिक भी नियम या अनुशासन भंग होता है, वहीं हमें कष्ट और दुःख उठाना पड़ता है। तैरना, नौका चलाना, यन्त्र चलाना, ठीक तरह वातचीत करना, उचित वर्ताव करना आदि विना सीखे नहीं आता। इसी तरह संसार के प्रत्येक कार्य और व्यवहार के नियम और क्रम को सीखना पड़ता है। जो व्यक्ति इन्हें जल्दी सीख लेता है, वह आगे वढ़ जाता है और जो इन्हें सीखने में मन नहीं लगाता, वह पिछड़ जाता है। अब्राहम लिंकन समय के वड़े पावंद



थे। वे नियम-पालन का महत्त्व जानते थे। इसीलिए वे लकड़हारे से अमरीका के राष्ट्रपति बन गए थे। इन नियमों को सीखने के लिए शुरू शुरू में परिश्रम करना पड़ता है। कष्ट भी उठाना पड़ता है। परन्तु कुछ समय के बाद ये नियम हमारे स्वभाव में उतर आते हैं। फिर हम अपने आप ही इनका पालन करने लगते हैं। एक शिशु जब पहले-पहल चलना सीखता है, तो वह बार-बार गिर पड़ता है। उसकी माता उसे उठाकर फिर चलाती है। वह फिर गिर पड़ता है। उसे चोट लगती है। वह रोता है। परन्तु कुछ दिनों के अभ्यास से उसे चलना आ जाता है।

विविध कला-कौशल में भी नियम और क्रम का बड़ा महत्त्व है। कला मानव संस्कृति और मानव जीवन की सच्ची नकल होती है। यदि वह नियमों का पालन नहीं करती, तो लोग उसे पसंद नहीं करते।

एक यूरोपियन जब पीतल पर नक्काशी करने लगता है तो पहले पीतल की प्लेट पर चित्र बना



लेता है; परन्तु बनारस के नक्काश इतने कुशल होते हैं कि उन्हें पीतल की प्लेट पर चित्र खीचने की आवश्यकता नहीं पड़ती। वे सीधे ही अपनी छेनी और हथौड़ी लेकर नक्काशी के काम में जुट जाते हैं। इसका कारण क्या है ?—अभ्यास! अभ्यास के द्वारा मनुष्य नियम और क्रम का पालन करने में समर्थ होता है। इसलिए वालक-वालिकाओं को छोटी उम्र में ही अनुशासन सीख लेना चाहिए, जिससे वड़े हो कर वे देश के उत्तम नागरिक वन सकें। जो वच्चे माँ-वाप की आज्ञा मानकर चलते हैं, वे स्वस्थ वनते हैं। जो अध्यापक की आज्ञा का पूरी तरह पालन करते हैं, वे अवश्य विद्वान बनते है।

नियम, क्रम और अनुशासन का पालन करने की भावना सच्चे कलाकार की उँगलियों में निवास करती है। जिस कलाकार को जितना अधिक नियम पालन का अभ्यास हो जाता है, वह उतना ही महान् कलाकार हो जाता है। ऐसे कलाकार के दिमाग में अपनी कला के सभी नियम क्रमवार उपस्थित रहते



हैं। क्रमानुसार ही उसकी उँगलियाँ काम करती हैं। परिणाम यह होता है कि उसकी छेनी, कलम या कूँची से कला का अनोखा नमूना प्रकट होता है। काव्य कला के नियम और क्रम को भली-भाँति समझ लेने के कारण ही रवीन्द्रनाथ की कला कला का आदर्श बन गई थी। इसी कारण वे विश्वकवि कहलाये।

नियम, क्रम, अनुशासन और आज्ञा पालन से जीवन में ऐसी सुन्दरता और सुघड़ता आ जाती है कि मनुष्य का अपना जीवन ही एक सुन्दर कला का नमूना बन जाता है। इसीलिए तो लोग ऐसे व्यक्ति को अपना आदर्श मानने लगते हैं और उसका अनुकरण करने का प्रयत्न करते हैं! राम, सीता, लक्ष्मण, भरत, कृष्ण आदि ऐसे ही आदर्श हैं, जिनकी लोग पूजा किया करते हैं।

कलाकार अपने कलागृह को, किसान अपनी जमीन को, गृहिणी अपने घर को, दूकानदार अपनी दूकान को, अधिकारी अपने कार्यालय को, कारखाने-दार अपने कारखाने को नियम और क्रम से सजा



हुआ देखकर आनन्द से खिल जाता है। उस आनन्द से किसी भी आनन्द की तुलना नहीं हो सकती। कारखाने का वही प्रवन्धक सबसे श्रेष्ठ गिना जाता है, जिसके कारखाने में सब काम समय पर नियम और क्रम से होता है।

समय-पालन भी नियम पालन का ही एक अंग है। यही नहीं, यह उसका आवश्यक अंग है। ट्रेन चले जाने के बाद आपका स्टेशन पर पहुँचना या न पहुँचना एक समान है। सँकट टल जाने के बाद यदि आप अपने मित्र की सहायता करते हैं तो वह व्यर्थ है। स्कूल में या कॉलेज में नित्य ही देर से पहुँचने वाला विद्यार्थी क्या सफल होगा? देर से कार्यालय में पहुँचने वाला कर्मचारी सबकी आँखों में खटकने लगता है। देर से दूकान खोलने वाला दूकानदार ग्राहकों को पसंद नहीं आता। रोग दूर होने पर दवाई देने का क्या लाभ? 'का वर्षा जब कृषी सुखाने?' परीक्षा समीप आने पर पढ़ाई में लगने वाला विद्यार्थी कभी अच्छे अंक नहीं पा सकता।



प्रत्येक कार्य का एक निश्चित समय होता है और प्रत्येक समय में मनुष्य के लिए कोई न कोई कार्य होता है। जिस व्यक्ति का समय कोरी बातों में ही बीत जाता है, वह क्या सफल होगा ? जो मनुष्य सोचने ही सोचने में सारा समय खो देता है, वह काम कब करेगा ? परीक्षा-भवन में जो छात्र आधा समय प्रश्नपत्र को समझने में लगा देगा, वह पूरा पेपर कैसे करेगा ? जो नवयुवक अपना सारा समय खेल-तमाशे में, गप्पों में अथवा इधर-उधर घूमने में ही गँवा देगा, वह परीक्षा में उत्तीर्ण कैसे होगा ? आगे चलकर जीवन में वह उत्तरदायित्व का पद कैसे सँभाल सकेगा ? कैसे वह जिम्मेदार नागरिक बन सकेगा? परीक्षा में सबसे श्रेष्ठ विद्यार्थी वही सिद्ध होते हैं, जो अपना समय-विभाग बना-कर सब काम नियम और क्रम से करते हैं। जिनके समय का न कोई मूल्य है, न नियम और न को[ई] क्रम—वे सफल भी नहीं होते।

समय का मूल्य पहचानकर ही योगी अर[विन्द]



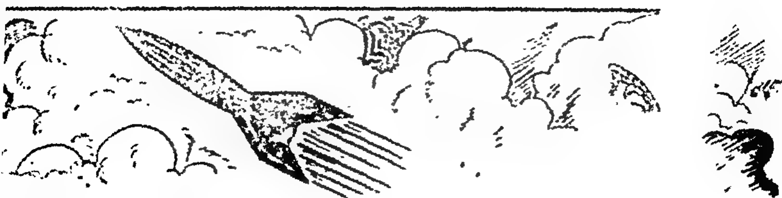
इतना काम कर गये हैं ।

समय-पालन, समय की रक्षा, समय से लाभ उठाना—ये सब बुद्धिमान मनुष्य के कार्य हैं । जिस प्रकार पैसा-पैसा जोड़कर धन जमा होता है, उसी तरह एक-एक क्षण के जुड़ने से हमारा जीवन बनता है । क्षणों की रक्षा कीजिए तो घंटों और दिनों की रक्षा अपने आप हो जाएगी । आपके उद्देश्य की रक्षा अपने आप हो जाएगी । अपने उद्देश्य को सामने रखिए । उसके अनुसार अपना समय-विभाग बना लीजिये और फिर उस समय विभाग का पालन कीजिए । फिर आप हरएक कार्य में सफल होंगे ।

आलसी का जीवन नष्ट हो जाता है । काम को कल पर टालने वाले का जीवन विकसित नहीं होता । देर से काम करने वाला काम में सफल नहीं होता । गांधी जी के सबसे प्यारे गीत में कहा गया है—"जो कल करना है आज कर ले, जो आज करना है कर ले अभी । जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया, फिर पछताये क्या होवत है ?" जवाहरलाल अपने समय का मूल्य



जानते थे। उन्होंने अपने सभी कार्यों के लिए नियम और क्रम निश्चित किया हुआ था। छोटे-से-छोटे काम को करना भी वे भूलते न थे। जो समय के महत्त्व को जानता है, वही चैतन्य है। जो समय के मूल्य को नहीं जानता, वह पिछड़ा हुआ और जड़ (मूर्ख) रहता है।



: ४ :

साहस से काम लीजिए

साहस भी चरित्र का एक उत्तम गुण है।

एक मनुष्य गहरे पानी में गिर गया। उसने साहस किया। उसने अपने हाथों से काम लिया। वह अपनी छाती के बल से तैरकर किनारे पर आ लगा। भयंकर लहरें उसका कुछ नही बिगाड़ सकी; क्योंकि वह वीर था, साहसी था।

अचानक आग लग जाती है। लाल धुएँ को देखकर आप घबरा नहीं जाते। चारों ओर धुआँ छा जाता है, चिनगारियाँ ही चिनगारियाँ छूटने लगती हैं, फिर ज्वालाएँ हू-हू करके जलने लगती हैं; परन्तु आप हिम्मत नहीं हारते। साहस से, सावधानी से आप कदम आगे बढ़ाते हैं और अपने आपको आग के घेरे से बाहर ले आते हैं। आग आपका कुछ भी



नहीं विगाड़ सकती; क्योंकि आप साहसी हैं, आप वीर हैं। किसी भी तरह का संकट होने पर जो धीरज नहीं खो देता; वल्कि दुगने उत्साह से कार्य करता है, वह साहसी कहलाता है।

एक स्कूल के वालकों को आग से वचाव की शिक्षा दी गई थी। एक दिन अध्यापक जी ने वालकों की परीक्षा लेने के लिए आग लगने की—खतरे की सीटी वजा दी। सीटी की आवाज सुनते ही वालकों ने अपनी पुस्तकें, कापियाँ और पेंसिलें जहाँ की तहाँ रख दीं। वे अपनी-अपनी जगह से उठ खड़े हुए। दूसरी सीटी वजते ही वे एक के पीछे एक—कतार वनाकर वाहर आए। कुछ ही मिनटों में स्कूल के सव कमरे खाली हो गए थे। अव ये वीर वालक आग से मुकावला करने के लिए तैयार खड़े थे; परंतु वहाँ आग न थी। उनके सामने अध्यापक जी खड़े मुस्करा रहे थे और वता रहे थे—"वालको ! मैंने तुम्हारी परीक्षा ली थी। तुम सफल हुए, तुम वीर हो, साहसी हो।"



मनुष्य गहरे पानी से तैरकर वाहर आया, किसके लिए ?—अपने लिए।

आप किसके लिए आग के घेरे से वाहर आये ?—अपने लिए।

क्या अपने लिए साहस करना—वीरता दिखलाना बुरा है ?—नहीं, कदापि नहीं। अपने जीवन की रक्षा और देखभाल आपका कर्त्तव्य है। वीरता दिखाने का, अपनी रक्षा करने का आपको पूरा अधिकार है।

परन्तु साहस और वीरता को अपनी रक्षा तक ही सीमित न रखिए। दूसरों की रक्षा के लिए भी उसका प्रयोग कीजिए। व्यक्ति से घर, घर से पड़ोस और पड़ोस से समाज बनता है। समाज का विशाल रूप राष्ट्र या देश है। जो व्यक्ति अपने मन को विशाल वना लेता है, वह साहस का उपयोग समाज के लिए करता है।

एक राक्षस (अत्याचारी) एक युवती को उठाकर ले गया। युवती ने उसके हाथों से छूटने की



वहुत कोशिश की; परन्तु वह सफल न हो सका। उसी समय माधव नामक एक युवक के कानों में उसकी चीख की आवाज पड़ी। वह अपने प्राणों की परवाह न करके अत्याचारी के पास गया। उस अत्याचारी (राक्षस) के हाथों में तलवार थी; परन्तु साहसी वीर नवयुवक ने तलवार छीन ली। बड़ी भयंकर लड़ाई हुई। राक्षस मारा गया और माधव ने युवती के प्राण वचा लिये।

माधव ने यह साहस किसके लिए किया ?—अपने लिए नहीं; वल्कि किसी दूसरे के लिए। उसने किसके लिए युद्ध किया ? अपने लिए तो नहीं किया ! उसके साहस का कारण किसी तरह का स्वार्थ न था। उसने किसी और के लिए युद्ध किया। उसने किसी के चिल्लाने की आवाज सुनी और उस आवाज से उसका वीर हृदय पिघल गया। यह हृदय का पिघलना ही वीरता और साहस का कारण है।

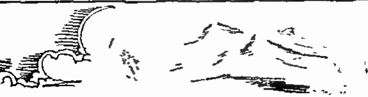
पंडित मदनमोहन मालवीय का जन्म साधारण परिवार में हुआ था। उन्होंने काशी में विश्वविद्यालय



खोलने का निश्चय किया। सैकड़ों बाधाएँ आईं; किन्तु मालवीय जी का साहस न टूटा। अन्त में वे सफल हुए। यह काम उन्होंने अपने लिए नहीं, समाज और राष्ट्र के लिए ही किया।

अग्नि-रक्षक दल के अनेकों लोगों ने अपने प्राणों पर खेलकर दूसरों की जानें बचाई। बहुत-से लोग, खानों में दबे साथियों के प्राणों की रक्षा के लिए अपनी जान पर खेल गए। अनेकों मनुष्य बाढ़ आने पर अपने तन की परवाह न करके दूसरों को बचाने के लिए गहरे पानी में कूद गए। भूकम्प से पीड़ित लोगों की रक्षा के लिए बहुत-से मनुष्य अपने प्राणों को तुच्छ समझकर दूसरों की रक्षा के लिए जुट गए। यदि वे लोग साहस न करते तो कितने ही लोग मर जाते! बहुत-से लोग अपने नगर की या देश की रक्षा के लिए शत्रु से जूझ गए, उन्होंने घावों की पीड़ा, भूख और प्यास, यहाँ तक कि मौत की भी परवाह न की।

साहस के बिना कोई भी बड़ा काम नहीं हो



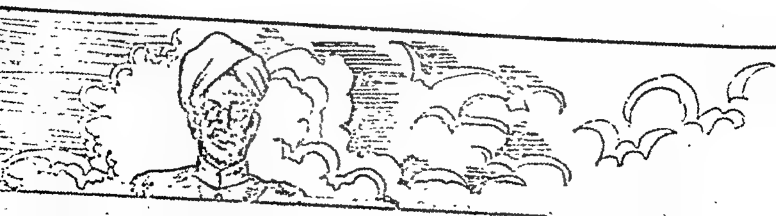
सकता। क्या साहस के अभाव में तेनसिंह एवरेस्ट की चढ़ाई कर सकते थे ? क्या साहस के बिना सरदार पटेल पाँच सौ रियासतों को भारत में मिला सकते थे ?

इसी साहस के बल पर—इसी वीरता के भरोसे विभीषण ने ललकार कर रावण से कहा था—"हे रावण ! तूने दैत्यों और देवताओं को जीत लिया, हे भाई ! यदि तू सुखपूर्वक जीना चाहता है, यदि तू लंका पर राज्य करना चाहता है, तो सीता को लौटा दे। और क्षमा माँग ले, राम तुझे अवश्य क्षमा कर देंगे।"

विभीषण को इस साहस के लिए अपमान और कष्ट सहन करना पड़ा; परन्तु उसने उचित कार्य करना अपना कर्त्तव्य समझा। इस प्रकार के साहस के लिए बड़े ऊँचे चरित्र की आवश्यकता होती है

साहस के तीन रूप हैं—

१. अपने लिए साहस, २. दूसरे की सहायता और रक्षा के लिए साहस और ३. चरित्र सम्बन्धी साहस।



: ५ :

साहस की परख

परीक्षा के समय जिसका साहस खरा उतरता है, वही असली साहसी है।

अन्तरिक्ष यात्रियों ने हमारे सम्मुख साहस का अनुपम आदर्श उपस्थित किया है। साहसी व्यक्ति प्राणों को तुच्छ समझता है।

राजस्थान के एक महाराज एक दिन सैनिकों की परेड देख रहे थे। सैनिकों में से बहुत-से सैनिक छोटे कद के थे और बहुत-से पतले शरीर के थे। महाराज ने अपने मंत्री को आज्ञा दी कि इन सैनिकों को छुट्टी दे दी जाए और इनके स्थान पर बलशाली शरीर वाले, ऊँचे लम्बे कद के जवान पहलवान भर्ती किये जाएँ। मन्त्री ने आज्ञा का पालन किया। सेना का राशन खाकर पहलवानों का शरीर खूब पुष्ट होने



लगा। एक दिन महाराज परेड देखने आए, तो हृष्ट-पुष्ट सैनिकों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए।

कुछ ही दिनों बाद राज्य पर आक्रमण हुआ। महाराज ने सेना को युद्ध के लिए आज्ञा दी। तब वे पहलवान अपने हृष्ट-पुष्ट शरीरों की ओर देख-देखकर रोने लगे। वे शरीर माखन मलाई से पालकर मोटे किये गए थे। वे युद्ध के लिए नहीं बने थे; क्योंकि उन शरीरों के अन्दर साहसी मन नहीं था। बस, साहस की परख हो गई। महाराज ने अन्त में फिर उन्हीं दुबले-पतले लोगों को बुलाया और युद्ध पर भेजा। वे जी-जान से लड़े और विजयी हुए।

साहस के लिए न जाति-पाँति की जरूरत है, न दृढ़ शरीर की। इसके लिए तो मन की उस भावना की आवश्यकता होती है, जिसे 'वीरता' कहा जाता है।

मार्च, सन् १९१० की एक घटना है। स्काटलैंड का एक जहाज आस्ट्रेलिया से उत्तमाशा द्वीप की ओर यात्रियों को ले जा रहा था। पश्चिमी आस्ट्रेलिया के



समुद्र तट से छः मील दूर जाकर ही वह जहाज एक चट्टान से टकरा गया। घोर कोलाहल मच गया। लोग इधर से उधर दौड़ने-भागने लगे, यह जानने के लिए कि क्या हुआ। परन्तु जहाज का कप्तान जरा भी न घबराया। वह समुद्र की तरह शान्त था। आधे घण्टे में उसने सभी यात्रियों को कुशलतापूर्वक नौकाओं में चढ़ा दिया। उसके धैर्य का सभी यात्रियों पर भारी प्रभाव पड़ा। वे सभी यात्री उत्साह में भरकर नावों को खेते हुए किनारे की ओर आ रहे थे। किसी एक का भी बाल बाँका न हुआ।

जब नौकाएँ तट पर पहुँच गईं तो उत्साह में भरे पुरुष नौकाओं से कूद गए। उन्होंने स्त्रियों तथा बालकों को उतारा। सबसे अन्त में, सबको सुरक्षित पहुँचाने के बाद कप्तान की नौका किनारे पर लगी। उसके तेजस्वी मुख पर खुशी से भरी मुस्कराहट थी। उसने अपने साहस की परीक्षा दे दी थी। वह उत्तीर्ण हुआ था। उसके शान्त साहस की यह विजय थी। उसकी कार्य-कुशलता का कारण उसका शान्त मन



ही था। शान्त व साहसी व्यक्ति अपना ढिंढोरा नहीं पीटता। वह तो काम को पूरा करके दिखलाता है।

कवि अबुसईद बहुत बीमार था। एक दिन उसके मित्र उसका हालचाल पूछने आए। जब वे उसके घर के पास पहुँचे तो दरवाजे पर क्या देखते हैं कि उसका लड़का खड़ा हँस रहा है। मित्रों ने अनुमान लगाया कि आज कवि को आराम है। जब वे घर के अन्दर पहुँचे तो सचमुच कवि उठकर बैठा कविता लिख रहा था। कवि ने मित्रों का आदर किया और कहा—"आज मेरे घर पर ही रहो, सवेरे चले जाना।" मित्रों ने मान लिया। शाम को जब भोजन का समय हुआ तो कवि ने मित्रों के लिए बहुत सुन्दर और उत्तम भोजन तैयार करवाया। भोजन से छककर एक मित्र ने कहा—"आज का दिन विचित्र है। सवेरे जब हम घर से चले थे तो हम दुखी और निराश थे, चिन्ता के मारे हमारा बुरा हाल था। हमें चारों ओर अँधेरा छाया हुआ दिखाई पड़ता था; परन्तु अब रात कैसी प्रकाशमान



है ! हम इस समय कितने प्रसन्न है, यह देखकर कि आप स्वस्थ है।" कवि ने मित्रों को अपनी एक कविता सुनाई, जिसका भाव यह था कि दुःख में धैर्य और साहस नहीं छोडना चाहिए। इससे दुःख स्वयं दूर हो जाते हैं, जैसे लू के बाद बादल आ जाते हैं।

संसार में साहस का बड़ा महत्त्व है। प्रत्येक मनुष्य के और राष्ट्र के साहस की भी समय-समय पर परीक्षा होती रहती है। ऐसे समय पर जो मनुष्य और जो राष्ट्र साहस छोड़ देता है, वह हार जाता है। स्वाधीनता प्राप्त करने के उपरान्त भारत के साहस की परीक्षा का समय तब आया था, जबकि चीन ने लद्दाख और नेफा पर आक्रमण किया था। उस समय भारत के राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद थे। उन्होंने राष्ट्र के प्रत्येक नर-नारी को आह्वान करते हुए कहा था "भारतीयों का कर्त्तव्य है कि एक-जूट होकर संकट का मुकाबला करें।" जनता ने राष्ट्रपति की बात सुनी। एकजूट होकर उसने आक्रमणकारी का मुकाबला किया। परिणाम यह हुआ



कि आक्रमणकारी को वापस लौटना पड़ा। अधिक सेना और शस्त्रास्त्र होते हुए भी आक्रमणकारी को वापस क्यों लौटना पड़ा ? कारण यह है कि उस समय भारतीयों ने अटूट धैर्य और साहस का परिचय दिया। साहस के सामने संकट ठहर न सका।

जीवन में कितना भी बड़ा संकट आ जाए, जो व्यक्ति साहस को हाथ से नहीं छोड़ते, वे अवश्य विजयी होते हैं। निराश मत होओ। धैर्य और साहस मत खोओ। खुशियों के पल आयेंगे। वे दुःख की घटाओं को दूर कर देंगे।



: ६ :

प्रसन्नचित्त वन जाइए

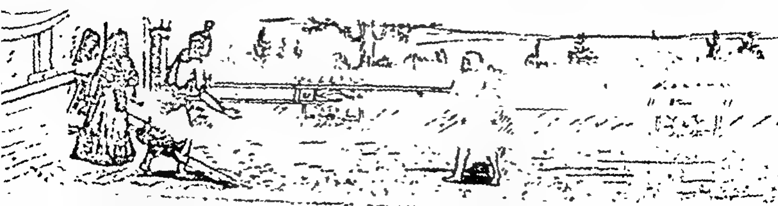
गीता में मन की प्रसन्नता की वड़ी प्रशंसा की गई है। जिसका मन सदा प्रसन्न रहता है, वह ठीक काम कर सकता है। वह अत्यधिक काम कर सकता है। वह शीघ्र काम कर सकता है। जलते-कुढ़ते हुए काम करना न करने के वरावर है।

एक दिन विद्यार्थियों का एक दल पिकनिक के लिए एक जंगल में गया। थोड़ी ही देर में घनघोर वादल घिर आए। उस समय सबने यही उचित समझा कि घर को लौटना चाहिए। सभी वालक अपनी-अपनी साइकिलें उठाकर नगर की ओर चल पड़े। परन्तु वर्षा शुरू हो गई और सभी लगे भीगने। अव मार्ग में कोई स्थान भी न था, जहाँ वैठकर वे वर्षा से वच सकें। इसलिए चलते जाने के सिवा कोई



चारा न था। परन्तु सब मन ही मन कुढ़ रहे थे कि आज क्यों पिकनिक पर आए। इसी समय एक हँसोड़ बालक एक हँसी से भरा गाना गाने लगा। धीरे-धीरे सभी उसके सुर में सुर मिलाने लगे। कुछ बालक मुँह के बाजे बजाने लगे और कुछ मुँह से तबला बजाने की नकल करने लगे। कुछ ही देर पहले इस पार्टी में शोक छाया हुआ था परन्तु गाना शुरू होने के बाद सबके चेहरे खिल चुके थे। अब उनमें से कोई भी उदास, दुखी या सुस्त न था। किसी के मन में भी सुस्ती, दुःख और निराशा न थी। किसी के चेहरे पर कुढ़न जलन या थकान का चिह्न न था। गाने के साथ ताल दी जा रही थी।

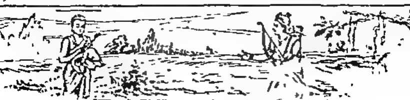
वर्षा और जोर की शुरू हो गई तो हँसोड़ बालक नाचने और गाने लगा। देखते-देखते सभी बालक अपनी-अपनी साइकिल रखकर उसके पास आ गये। खूब जमकर नाच हुआ। आनन्द आ गया। थोड़ी देर पहले जो कपड़े भीगने का दुःख छा गया था, वह अब कहीं न था। सभी नाच और गाने में



मस्त थे।

लंका के भीषण संग्राम के बाद, जब रावण मारा गया और विभीषण राजसिंहासन पर बैठे, तब श्रीराम एक ओर बैठे हँस रहे थे। उस समय उनकी प्रसन्नता को देखकर विभीषण ने कहा—"श्रीराम अयोध्या में राजतिलक के समय भी प्रसन्न थे और वनवास के समय भी, रावण से भीषण युद्ध छिड़ने पर भी प्रसन्न थे और विजय प्राप्त करने पर भी। वे सदा प्रसन्न रहते हैं, यही इनकी वीरता का रहस्य है।"

मनुष्य की एक मधुर मुस्कान उसके संगी-साथियों की निराशा को दूर कर सकती है। प्रसन्न रहने वाली माता अपने बच्चों को सदा प्रसन्न रहना सिखलाती है। प्रसन्न मन वाली नर्स रोगी को शीघ्र नीरोग कर देती है। प्रसन्न-हृदय स्वामी अपने कर्मचारियों को प्रसन्न रखता है और उन्हें थकने नहीं देता। प्रसन्नचित्त छात्र सारी कक्षा को प्रसन्न रखता है। वह किसी को चिड़चिड़ा, दुखी या निराश देखता



है, तो हँसी की कोई बात कहकर या कोई चुटकुला सुनाकर हँसा देता है। प्रसन्न हृदय कार्यकर्त्ता अपने संगी-साथियों को प्रसन्न रखता है। प्रसन्न-हृदय नागरिक अपने देशवासियों के उत्साह और साहस को कायम रखता है।

हँसते-हँसते काम कीजिए। हँसते-हँसते आराम कीजिए। हँसते-हँसते कष्टों का मुकावला कीजिए। हँसते-हँसते संकटों को पार कीजिए। हँसते-हँसते पर्वत की चढ़ाई चढ़िए, आपको थकान कम होगी। हँसते-हँसते कठिन से कठिन काम कीजिए, काम काफी आसान हो जाएगा। हँसना जीवन की धूप है, जीवन का प्रकाश है, जीवन का जीवन है।

श्री लालवहादुर शास्त्री का वचपन अभावों में कटा था। किन्तु उनके मुख पर सदा मुस्कान खेलती रहती थी।



इन्द्रियों को वश में कीजिए

जिसकी इन्द्रियाँ वश में है, वही बुद्धिमान है। एक मूर्ख बालक अपने घाव को नाखूनों से खुरच डालता है। उसका घाव बढ़ जाता है। आप उसे मूर्ख कहते हैं। गधा मिट्टी में लोटता है और उसे आप बेवकूफ जानवर कहते हैं। हाथी अपनी सूंड से अपने सिर पर मिट्टी डालता है, आप उसे मतवाला कहते हैं।

यह सच है कि जो अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं रखता वह मूर्ख है, बेवकूफ है, मतवाला है।

टाँगों से हम चलने का काम लेते है, लेकिन जो बेकार घूमता है, उसे हम आवारा कहते हैं। मुंह का काम बोलना है, पर गाली देने वाले को हम बकवादी कहते हैं। इसी तरह हरएक इन्द्रिय की बात है।



हमें आँखें देखने के लिए मिली हैं, नाक सूँघने के लिए मिली है, जीभ बोलने के लिए और रस चखने के लिए मिली है, चमड़ी छूने के लिए मिली है, कान सुनने के लिए मिले हैं। यदि हम अपनी इन इन्द्रियों को वश में रखें, तभी इनकी शक्ति जमा रहती है। फिर जब हम इन्हें किसी काम में लगाते हैं, तो ये इन्द्रियाँ काम को भली भाँति पूर्ण करने में सफल होती हैं। जब हम अपने अंगों को ठीक कामों में लगाते हैं तो सब लोग हमारी बड़ाई करते हैं। लेकिन यदि हम इनको बुरे कामों में लगाते हैं तो हमें बुराई ही मिलती है।

कहते हैं कि एक बार हजरत मुहम्मद साहब के पास एक फरिश्ता आया। उसने मुहम्मद साहब को साथ ले जाकर कुछ महल दिखलाये और पूछा—"इन महलों में रहने का किसको हक है ?" मुहम्मद साहब ने जवाब दिया—"इन महलों में रहने का उनको हक है, जिनके अंग अपने वस में हैं।"

श्रवण कुमार ने अपनी इन्द्रियों को वश में किया



हुआ था, तभी वह माता-पिता की आदर्श सेवा करने में सफल हुआ।

हुसैन हजरत मुहम्मद साहब का पोता था। एक दिन वह बैठा हुआ था कि एक नौकर गरम पानी लेकर आया। नौकर की भूल से कुछ खौलता पानी हुसैन के ऊपर गिर गया। नौकर ने पानी जान-बूझ कर न गिराया था। वह तो अचानक गिर गया था। क्रोध में हुसैन ने छड़ी उठा ली। नौकर समझदार था। वह घुटने के बल बैठ गया और उसने झट से कुरान शरीफ की एक आयत सुनाई—"स्वर्ग उनके लिए है, जो अपने गुस्से को लगाम लगाकर रखते हैं।"

यह सुनकर हुसैन का गुस्सा ठंडा हो गया। कहावत है कि 'बातें हाथी पाइये, बातें हाथी पाँव'। पुराने जमाने में राजा लोग किसी की बात पर खुश होकर उसको हाथी इनाम दे दिया करते थे और किसी की बात बहुत अनुचित हो तो उसे हाथी के पाँव तले कुचलवा दिया जाता था। जीभ जिसके वश



में होती है, वह बहुत-सी मुसीबतों से बच जाया करता है।

इन्द्रियाँ वश में होने के कारण ही श्रीराम को वन में भी कोई कष्ट न था।

धम्मपद में भगवान् बुद्ध ने उपदेश दिया है—"लोगों की प्रशंसा करने पर जिसका मन शान्त है, लोगों के निन्दा करने पर जिसका मन शान्त रहता है, वह चरित्र के श्रेष्ठ गुण को प्यार करता है, उसे सदा शान्ति मिलती है और लोग उसे प्यार करते हैं।"

भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है—"जो इन्द्रियों के पीछे-पीछे दौड़ता है, उसकी मति मारी जाती है, जैसे आँधी आने पर नाव उलट जाती है।"

एक व्यक्ति को बहुत बोलने की आदत थी। उसकी बात पर कोई ध्यान न देता था। उसने एक महात्मा से उपाय पूछा। महात्मा ने उत्तर दिया, "यदि तुम चाहते हो कि लोग तुम्हारी बात सुनें तो तुम दूसरों की बात को ध्यान से सुनो, कम बोलो।"

एक महात्मा के पास एक आदमी अपने बेटे को



लेकर आया। महात्मा से उसने कहा—"महात्मा जी ! इस बालक को गुड़ खाने की बड़ी बुरी आदत पड़ गई है। कृपा करके इसकी आदत को छुड़ा दीजिए। महात्मा ने उससे कहा—"तुम सात दिन बाद मेरे पास आना तब इसकी आदत छुड़ा देंगे।"

सात दिन बाद वह आदमी फिर अपने पुत्र के साथ वहाँ आया। महात्मा ने उसके पुत्र को पास बुलाया और कहा—"बेटा ! जाओ अधिक गुड़ मत खाया करो।"

उस मनुष्य ने महात्मा से कहा—"महाराज ! यह बात आप उसी दिन कह देते।"

महात्मा ने कहा—"उस दिन मेरी बात का इस पर असर नहीं हो सकता था उन दिनों मैं भी गुड़ खाता था। इन सात दिनों में मैंने गुड़ को छुआ भी नहीं। इसलिए आज मेरी बात का असर हो सकता है।"

इन्द्रियों को बे-लगाम छोड़ देने पर मनुष्य घृणा, भय, निन्दा, अधीरता, लोभ, क्रोध आदि का शिकार



बन जाता है। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—"इन्द्रियाँ जिसके वश में हैं, उसकी बुद्धि स्थिर रहती है।"

सच है, इन्द्रियाँ जिसके वश में नहीं हैं, वह वे-लगाम घोड़े की तरह है, चाहे किसी से टकरा जाए, चाहे जिस तरफ हो जाए।

एक किसान के पास एक वैल था। किसान अपने वैल को लेकर खेत पर जाता। काम के बाद वह उसके आगे सानी और पानी रखता। वैल अपना खाना खाकर और पानी पीकर मस्त खड़ा जुगाली किया करता। किसान वैल को बाँधता न था। एक दिन वैल ने देखा कि सामने वड़ा सुन्दर खेत लहलहा रहा है। उसने इधर-उधर देखा, पास में कोई न था। वह वैल खेत में घुस गया। उसने मजे से पेट भर कर खाया और वहुत-सा खेत कुचल डाला। जब किसान ने आकर यह देखा तो उसने डंडा लिया और लगा वैल को तड़ातड़ पीटने। फिर उसने वैल को एक मजवूत रस्सी से वाँध दिया। तव वैल रोज रस्सी से वँधा खड़ा रहता। एक दिन वैल से न रहा



गया। मौका पाकर उसने रस्सी तुड़ा ली और खेत में जाकर फसल को खाने और खेत को खराव करने लगा।

इतने में किसान आ गया। उसने वैल को वहुत पीटा और वह उसके लिए लोहे की जंजीर लाया। अव लोहे की जंजीर को तोड़ना वैल के वस में न था। मन मारकर उसे खड़ा रहना पड़ता।

इसी तरह जो मनुष्य अपनी स्वतन्त्रता चाहता है, उसे अपनी इन्द्रियों को वश में रखना चाहिए। जो जितना अधिक इन्द्रियों को वश में रखता है, वह उतना ही स्वतन्त्र रहता है और जो जितना ही इन्द्रियों के पीछे भागता है, वह उतना ही बन्धन में फँसता है।

जितना अच्छा घोड़ा हो, उतनी ही वढ़िया लगाम होनी चाहिए। इसी प्रकार जितने ही अधिक शक्तिशाली अंग हों, उतनी ही मन की दृढ़ता होनी चाहिए, ताकि इन्द्रियाँ वे-कावू न हों। "वशे हि यस्य इन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।"

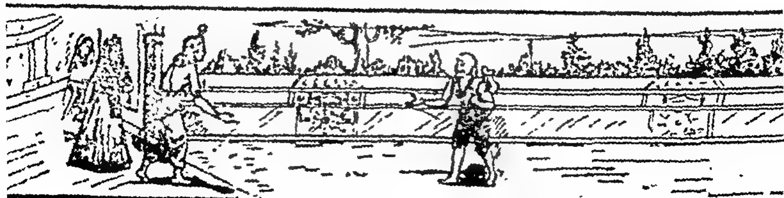


: ८ :

हाथी और अंकुश

आपने कभी हाथी देखा होगा। हाथी पर बैठा महावत लोहे के छोटे से अंकुश को उसकी गर्दन पर चुभोता है। इससे वह जिधर चाहता है, उधर ही हाथी को चलाता है। बालिश्त भर का अंकुश भारी-भरकम हाथी को अपने वस में कर लेता है। इसी तरह चरित्र वाले आदमी में एक ऐसा तेज होता है, जिससे बड़े-बड़े लोग भी उसके वस में हो जाते हैं। वह जहाँ जाता है, उसका स्वागत होता है। वह जिससे काम करने के लिए कहता है, वही उसका काम करने को दौड़ पड़ता है। वह जो बात कहता है उसमें सच्चाई और वजन होता है। उस बात को लोग झट मान लेते हैं। इस तेज के कारण ही इसे तेजस्वी कहते हैं।

सुन्दर और सुडौल होने से ही कोई तेजस्वी नहीं



हो जाता। तेज तो चरित्र से आता है। धीरज से, पवित्रता से, तप से, दूसरों का उपकार करने से और विद्या से मनुष्य में तेज आता है।

तेजस्वी मनुष्य जिधर जाता है, उधर ही उसका स्वागत होता है। लोग उसका आदर करते हैं और उसका कहना मानते हैं।

इसीलिए तेजस्वी व्यक्ति हरएक काम में सफल होता है। इन्द्रियाँ जिसके वश में नहीं, वह निस्तेज हो जाता है। वह दुर्बल हो जाता है। वह महान कार्यों का बोझ नहीं उठा सकता।

राजा जनक की सभा लगी हुई थी। वहाँ अष्टावक्र ऋषि आये। उनका शरीर आठ जगह से टेढ़ा-मेढ़ा था। उन्हें देखकर बहुत से लोग हँस पड़े।

अष्टावक्र बड़े तेजस्वी थे। उन्होंने कहा—"ओह! मुझे अब पता चला कि मैं राजा जनक की सभा में नहीं आया, बल्कि चमड़े के व्यापारियों में आ गया हूँ।"

इतना सुनकर सारी सभा सन्न रह गई। ऋषि



अष्टावक्र के तेज को राजा जनक जानते थे। उन्होंने खड़े होकर सारी सभा को बताया कि इस समय इस सभा में सब से बड़े विद्वान और ज्ञानी अष्टावक्र ही हैं।

तब राजा जनक ने अष्टावक्र को बड़े आदर से सभा में सबसे ऊँचे आसन पर बिठाया।

तुलसीदास ने कहा है कि तेजस्वी को छोटा न गिनना चाहिए। एक छोटे बालक में भी तेज हो सकता है और एक बड़ा आदमी भी तेजहीन हो सकता है। जो किसी की निन्दा करता है, किसी को झूठी खुशामद करता है, ओछी बातें करता है, नीचता से भरी इच्छा करता है, दूसरे की उन्नति पर कुढ़ता है—वह अपना तेज खो बैठता है। जो बुरे कर्म करता हुए लजाता नहीं, दूसरों को नाजायज दबाता रहता है, दूसरों का हक मारता है और अपने वचन से फिर जाता है, उसका तेज खत्म हो जाता है। जो शरीर, वस्त्र और घर को साफ-सुथरा नहीं रखता, उसका तेज नष्ट हो जाता है।

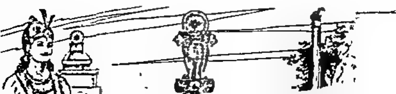
अहंकारी का भी तेज नष्ट हो जाता है। अहंकार



को वश में रखने के लिए यत्न करना पड़ता है। मन, वचन और कर्म से जो अहंकार प्रकट नहीं होने देता, वह तेजस्वी बन जाता है ।

क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए, इसमें जो पहचान नही कर सकता, जो तोड़-फोड़ के काम करता रहता है, उसका तेज नष्ट हो जाता है । जो झूठा ढोंग रचता है, झूठा अभिमान करता है, जो धन आदि के नशे में चूर रहकर दूसरों का ध्यान नहीं रखता, उसका तेज नष्ट हो जाता है ।

जो अपनी गलत बात को ठीक बताता है और उसी का हठ पकड़ लेता है, जो अपवित्र कामों में लगा रहता है, जो चलते-चलते खाता है, बात करके फिर जाता है, उसका तेज नष्ट हो जाता है जो अन्याय से, भ्रष्टाचार से धन इकट्ठा करता है, दूसरे की धरोहर दबा लेता है, उधार लेकर वापस नही करता, उस का तेज नष्ट हो जाता है । जो सदा ईर्ष्या-द्वेष की बातें करता रहता है, उसका तेज नष्ट हो जाता है।

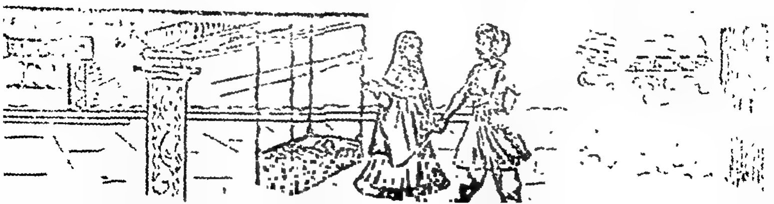


सच बोलिए और मीठी वाणी बोलिए, किन्तु कड़वा सत्य मत बोलिए। मीठा किन्तु झूठा वचन मत बोलिए। इस प्रकार के आचरण से आपका तेज बढ़ेगा।

तेजस्वी मनुष्य निडर होता है। वह अपने शरीर को, कपड़ों को और मन को साफ-सुथरा रखता है। वह सदा अपनी जानकारी बढ़ाता रहता है और जिस बात के बारे में जानकारी हो, उसी बात में बोलता है। वह हर बात को एकाग्र मन से सुनता है, चित्त लगाकर समझने की कोशिश करता है।

तेजस्वी मनुष्य का मन विशाल होता है, वह उदार होता है। वह अकेला नहीं खाता, औरों को खिलाकर खुश होता है। उसका शरीर और मन अपने वस में होता है। उसके अंग उसके हुक्म पर चलते हैं। उसकी इन्द्रियों को लगाम उसके अपने हाथों में होती है।

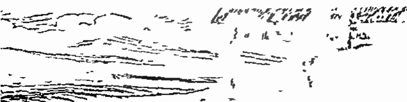
इन्द्रियाँ आराम चाहती हैं; किन्तु यदि ये हर



समय आराम करें तो काम कैसे होगा ? जो इन पर अंकुश रखकर इन्हें काम में लगाता है, वही अपने काम में सफल होता है।

तेजस्वी मनुष्य को अपने काम को पूरा करने के लिए यदि कष्ट सहना पड़े तो उसे हँसते-हँसते सहलेता है। वह परोपकार के लिए भी कष्ट सहते हुए बार-बार अपनी बड़ाई नहीं करता। वह काम में सफल होने के लिए श्रम, चेष्टा, उद्योग और प्रयत्न करता है।

तेजस्वी मनुष्य नई बातें और नये काम, नये तरीके और नये उपाय सीखने के लिए हमेशा तैयार रहता है। विनोबा जी ने एक जगह लिखा है—"बूढ़ा कौन है ?—बूढ़ा वह है जो कहे कि मैं आगे नया काम नहीं सीख सकता।" ठीक है, जो हमेशा नया काम सीखने के लिए तैयार है, वह जवान है; चाहे उसकी उम्र साठ साल ही क्यों न हो। ऐसा आदमी तेजस्वी होता है। वह नई पुस्तकें पढ़ने को तैयार रहता है, नई बातें सुनने को तैयार रहता है, लेक्चर और बहस



को ध्यान से सुनकर अपने मतलब की चीज उसमें से वह निकाल लेता है। अपने आपको लगातार सुधारता सँवारता रहता है। उसकी बात में रस होता है, खिचाव होता है और दूसरों के लिए उसके मन में लाभ की बातें भरी होती हैं।

जिस समय दूसरे जीव मौज-मजे में लगे होते हैं, उस समय मधुमक्खी फूल-फूल पर जाकर रस ग्रहण करती और उसे जमा करती है। क्या हम इससे शिक्षा नहीं ले सकते ?

तेजस्वी मनुष्य में सरलता और भोलापन होता है। उसमें एक कुँवारापन होता है, जिससे वह दूसरों के मन मोह लेता है। वह बुरी तरह लजाता-शर्माता नहीं, लेकिन वह कहीं भी बेशर्म नहीं होता। लाज-शर्म गई तो आब गई।

तेजस्वी मनुष्य दूसरों की रक्षा करने में अपनी वीरता समझता है, दूसरों को कष्ट पहुँचाने में नहीं। घर के लोगों की रक्षा, पड़ोसियों की रक्षा, मित्रों की रक्षा, नगरवासियों की रक्षा और समय



पड़ने पर देश की रक्षा— इस रक्षा कार्य के लिए वह सदा तैयार रहता है।

जो दूसरों पर निर्भर रहता है, वह दुर्बल हो जाता है। वह अपना तेज गँवा बैठता है। जो अपने हाथों से काम करने में संकोच करता है, उसका तेज नष्ट हो जाता है।

तेजस्वी सत्य बोलता है, वचन से नहीं फिरता, सत्य व्यवहार करता है, लेन-देन में सच्चाई का वर्ताव करता है। बात-बात में उसे गुस्सा नहीं आता। वह शान्तचित्त होता है। वह चुगलखोर नहीं होता। उसमें दया की भावना होती है। वह दूसरों का दुःख देखकर झट पिघल जाता है। वह हर किसी चीज का लालच नहीं करता। वह छोटे-बड़े सबसे ही कोमलता का वर्ताव करता है। वह दूसरों के अपराध क्षमा कर देता है।

इस तरह के गुणों के कारण उसके मुँह पर एक 'नूर' आ जाता है।

इसे ही तेज कहते हैं। इस तेज के कारण बहुत



से लोग उसकी आँखों से आँखें नहीं मिला सकते। जब वह किसी सभा में आता है तो उसे ऊँचा आसन मिलता है। लोग उसकी बात को ध्यान से सुनते हैं और उसका हुक्म बजा लाने में गौरव समझते हैं।



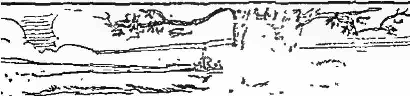
: ६ :

दान कीजिए

संसार में जिस काम से बहुत जल्दी यश मिलता है, वह है दान। दान से किसी मनुष्य की उदारता का पता चलता है। दान तुरन्त फल देने वाला शुभ काम है।

दान देने के लिए धनी होना ही जरूरी नहीं है। इसके लिए तो हृदय विशाल होना चाहिए। जिसका दिल खुला है, वह हर रोज दूसरों को कुछ न कुछ दान करता है। गुरु नानक जीवन-भर उपदेश का दान देते रहे। उन्होंने लाखों लोगों की आत्मा को ऊँचा उठाया।

कहा जाता है कि गुड़ न दे, गुड़ की सी बात तो करे! यदि आप किसी दुखी आदमी को धीरज बँधाने की बात कहते है तो यह भी एक तरह का दान ही



है। मुसीबत में पड़े हुए मनुष्य को यदि आप मुसीबत से छुटकारा पाने का उपाय बता देते हैं तो यह भी दान ही है। किसी विद्यार्थी को पढ़ने का ढंग बता देते हैं और पास होने में उसकी सहायता करते हैं तो यह भी दान ही है।

पड़ौसी के दु:ख-दर्द में हाथ बँटाना, उनके छोटे-छोटे काम कर देना, उनकी परेशानियों, दिक्कतों और समस्याओं को दूर करने के लिए समय देना भी दान ही है।

प्यासे को पानी पिलाना, भूखों को रोटी देना, गर्मी से तपे हुए को छाया में बैठने देना, यह भी दान ही है।

हर रोज आपको ऐसे आदमी मिलते हैं, जो कई बातें आपसे कम जानते हैं। उन्हें यदि आप कुछ सिखलाते हैं तो यह भी दान ही है।

किसी को आप भोजन, कपड़े, व्यायाम, व्यापार, मनोरंजन या सेहत के बारे में काम की बात बता देते हैं, यह भी तो दान ही है।



भूखे को भोजन देना वहुत अच्छी वात है। प्यासे को पानी पिलाना नेक काम है। नंगे को कपड़ा पहना देना शुभ काम है। ठंड से ठिठुरते को गरम कपड़ा देना अच्छा काम है। इसी तरह जो मनुष्य किसी काम को अच्छी तरह से नहीं कर सकता, उसे काम करने का सही ढंग वता देना भी वहुत अच्छा काम है। इसे ज्ञान-दान कहा जाता है।

आपका सहपाठी वहुत गरीव है। उसके पास पुस्तक, कलम, कापी, दवात आदि के लिए पैसे नहीं हैं। गुपचुप उसकी सहायता करके आप वड़ा अच्छा काम करते है।

यह मत कहो कि हम किस लायक हैं, हम गरीव हैं, हम किसी की क्या सेवा कर सकते हैं!

दुर्योधन ने पांडवों को मारने का एक तरीका निकाला। उसने लाख का एक घर वनवाया और धोखे से पांडवों को उस घर में ठहराया। रात के समय पांडवों के पास एक आदमी आया। उसने उन्हें वताया—"यह घर लाख का है। दुर्योधन तुम्हें इस

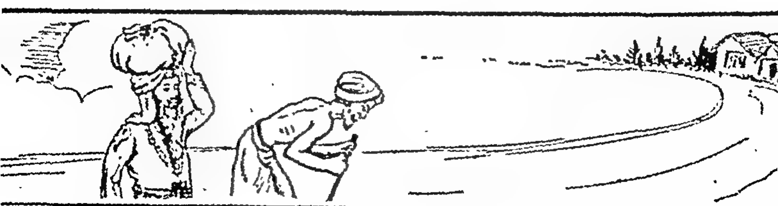


घर में जला डालना चाहता है। जरा-सी आग दिखाते ही यह घर भभक कर जल उठेगा। तुम्हारे भागने का कोई रास्ता नहीं है। मैं एक सुरंग खोदने वाला हूँ। सुरंग खोदकर रास्ता बना देता हूँ। तुम उसमें से वच कर निकल जाओ।"

उस मनुष्य ने सुरंग खोदी और पांडव उस रास्ते से निकल गए। रात होते ही दुर्योधन ने उस मकान को आग लगवा दी।

वड़े लोगों को भी बहुत-सी बातों का पता नहीं होता। एक साधारण आदमी उन्हें ज्ञान का दान कर सकता है। सुरंग खोदने वाला एक मामूली आदमी था। लेकिन उसके मन में दान की भावना थी। उसने पाँडवों को उनके प्राणों का दान दिया। उसने अपने ज्ञान का दान करके पांडवों के प्राण वचाये।

एक बार अकाल पड़ा। महाराज रणजीतसिंह ने अनाज के भंडार खोल दिये। एक वूढ़े ने अनाज की वड़ी गठरी बाँधी। परन्तु वह उसे उठा न सका।



तब महाराज स्वयं उसे उठाकर उसके घर तक छोड़ आये। इस प्रकार के सहायता-पूर्ण कार्यों से ही रणजीतसिंह का यश चारों ओर फैल गया था।

कहने का अर्थ यह है कि दान के लिए मन में इच्छा होनी चाहिए।

एक बालक स्कूल में पढ़ने जाता है। वह अपने गाँव के बूढ़ों को चिट्ठी पढ़कर सुना देता है। उनकी चिट्ठी लिख देता है। उनका मनीआर्डर फार्म भर देता है। छुट्टियों में लोगों को पढ़ना-लिखना सिखाता है। यह भी दान ही है।

छायादार पेड़ लगवाना, कुएँ बनवाना, धर्मशाला बनवाना, प्याऊ बनवाना, पशुओं के पानी पीने के हौद बनवाना, आदि दान करने के सैंकड़ों रास्ते है। अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार हरएक आदमी को दान करना ही चाहिए। दान दिखावे के लिए नहीं; बल्कि सच्चे उपकार के लिए ही करना चाहिए। तुम्हारा दायाँ हाथ जो दान करे उसे बायाँ हाथ न जान पाये।

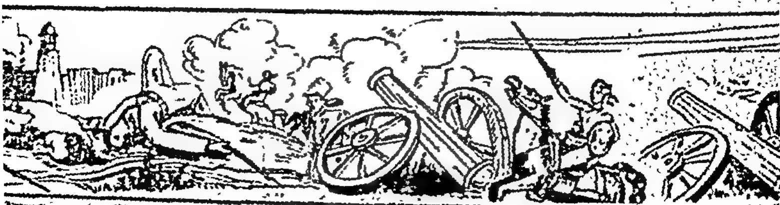


सयाने लोग कहा करते हैं कि जिस छत में परनाला नहीं होता, वह छत जल्दी ही बैठ जाती है। इसी तरह जो परिवार दान नहीं करता, वह फलता-फूलता नहीं। उसका यश मिट जाता है। सभी उसे 'स्वार्थी' और 'मतलबी' कहने लगते हैं।

दान करने से यश मिलता है; पर यश के लिए ही दान न करना चाहिए। बहुत से लोग दिखाने के लिए दान करते हैं। यह दान घटिया होता है। दान करके बराबर दूसरों को सुनाना, अपनी बड़ाई करना, अहंकार करना—इससे दान की महिमा कम हो जाती है।

कुछ लोग दान में भी चोरी करते हैं। मन्दिर, गुरुद्वारे या गिरजे की संदूकची सामने आने पर लोगों की नजरें बचाकर वे दस-बीस पैसे उसमें डाल देंगे। पास में बहुत धन होने पर भी बहुत कम दान करना दान में चोरी है। कोई नहीं देख रहा, यह सोच कर बहुत कम दान देना, दान में चोरी है।

जो दान करता है उसका मन उसे आप ही



सराहता है। उसके मन को शान्ति मिलती है। आपके पास धन अधिक है, तो धन दान कीजिए, अन्न अधिक है तो अन्न दान कीजिए, कपड़ा अधिक है तो कपड़ा दान कीजिए, ज्ञान अधिक है तो ज्ञान का दान दीजिए। जो मनुष्य दान करता है, उसे भगवान् और भी बहुत देता है। जो भगवान् के बन्दों की सहायता में कंजूसी दिखलाता है, भगवान् भी उसके लिए कंजूस हो जाते है।

दान भी चरित्र के गुणों में से एक गुण है। दानी को यश मिलता है। सब लोग दानी की प्रशंसा करते हैं। सब कुछ होते हुए भी जो दान नही कर सकता, उसे लोग मनहूस समझते हैं। समय पड़ने पर लोग भी उसकी सहायता के लिए आगे नही आते।

हमें दूसरों की सहायता के लिए हर समय तैयार रहना चाहिए। यह हमारे अच्छे नागरिक होने की निशानी है। हमें प्रतिदिन के जीवन में एक उपकार का काम अवश्य करना चाहिए।

दो हजार बरस हुए होंगे, जबकि चरक नाम के



एक ऋषि हुए। उन्होंने अपना सारा जीवन लोगों के रोग दूर करने के लिए दान कर दिया था। उन्होंने धनुष के घावों को भरने की विधि बताई। उन्होंने आँख, कान, नाक, गला, और दाँत के रोग दूर करने के इलाज बताए। उन्होंने बच्चों के रोग दूर करने के उपाय खोज निकाले। बच्चा पैदा होने के बाद माता की देखभाल के तरीके बताये। उन्होंने अपना सारा जीवन लोगों की सेवा में दान कर दिया। इस तरह के दान के कारण ही संसार में आज मनुष्य सबसे उत्तम प्राणी माना जाता है।

एक सुश्रुत नामक महात्मा हुए। उन्होंने दवाओं के गुण-दोष जानने में सारा जीवन लगा दिया। मनुष्य-शरीर की एक-एक हड्डी गिन डाली। मांस-पेशियाँ और नाड़ियाँ गिनीं और उनके अलग-अलग नाम रखे। मनुष्यों की सेवा के लिए सुश्रुत ने अपना जीवन दान कर दिया।

ग्लासगो के अस्पताल में एक डाक्टर था। उसका नाम था जोसफ लीस्टर। वह बहुत मन लगाकर





रोगियों की सेवा किया करता था। उसके मन में एक ही इच्छा थी कि वह कोई ऐसी दवा खोज निकाले जिससे घावों का इलाज करना आसान हो जाए। रात-दिन वह इसी चिन्ता में लीन रहता था। कई दवाओं की उसने परीक्षा की। अन्त में उसने कार्बोलिक एसिड को खोज निकाला। इसके प्रयोग से रोगियों को जल्दी आराम होने लगा। उसने अपने ज्ञान का संसार को दान किया। इंग्लैंड की सरकार ने उस डाक्टर को लार्ड बना दिया और सारे संसार में उसका यश फैल गया।

मन में दान की इच्छा जगाइए। दूसरों को जो कुछ आसानी से दे सकते हो, दे दो। जो कष्ट से दे सकते हैं, वे तो संसार में अमर हो जाते हैं। पर यदि आप बिना कष्ट उठाये भी दान करते हैं तो भी आपका नाम सब जगह फैल जाता है। लोग आपका सम्मान करने लगते हैं। लोग आपका काम करने को तैयार हो जाते हैं। आपकी आज्ञा मानना वे अपने लिए सम्मान की बात समझते हैं। इससे बढ़कर

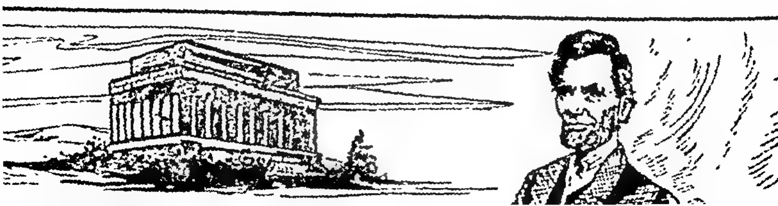


दान की महिमा और क्या हो सकती है !

दान करना चरित्र का एक आवश्यक गुण है। इस गुण को धारण करने वाला जीवन में जहाँ जाता है, वहाँ ही उसका यश उससे पहले पहुँच जाता है। इससे उसे हर काम में सफलता मिलती है।

गांधी जी ने कहा कि हमें अपने प्रेम की परिधि इतनी बढ़ानी चाहिए कि उसमें गाँव, नगर, प्रान्त सब आ जाएँ तथा इस प्रकार हमारे प्रेम का विस्तार सारे संसार तक हो जाए।

अब्राहम लिंकन का हृदय बड़ा विशाल था। उसने काले तथा गोरे लोगों की समानता का बीड़ा उठाया। इसके लिए उसने युद्ध का भी खतरा मोल लिया; परन्तु वह अपने लक्ष्य से न हटा। अन्त में काले लोगों को स्वतन्त्रता का दान करने में ही उसने अपने प्राण भी बलिदान कर दिए।



: १० :

सहनशीलता की किलेवन्दी

इस संसार में जन्म लेकर ऐसा कौन है जिसे थोड़ा-बहुत दुःख, अभाव, कष्ट, हानि या शोक नहीं होता ? इनका कुछ न कुछ हिस्सा हरएक को भोगना पड़ता है। फर्क इतना ही है कि धीरज वाला मनुष्य इनको छाती तान कर वीरता से सह लेता है और अधीर आदमी कायर बन कर रोने लगता है।

मनुष्य को चाहिए कि अपने मन के आसपास धीरज और सहनशीलता की किलेवन्दी कर ले। इस तरह की किलेवन्दी करके मनुष्य अपने ऊपर आई मुसीबत आदि से अपनी रक्षा कर सकता है।

जिस तरह रेगिस्तान में ऊँट गर्मी, भूख-प्यास आदि सहता हुआ बराबर आगे ही कदम बढ़ाता चला जाता है, उसी तरह धीरज वाला मनुष्य भी अपने



धीरज के सहारे ही मुसीवत को पार कर जाता है। उसका धीरज ही उसका सबसे वड़ा सहारा होता है। तेजस्वी मनुष्य अपने तेज के वल पर, शोक, रोग, आदि को अपने तेज से जल्दी दवा लेता है। वह अपने कष्टों को दूर करने के लिए दूसरों के भरोसे नहीं रहता। इसीलिए उसे कोई नीची नजर से नहीं देख सकता।

कुछ लोग जरा-सा संकट आते ही झंडे गिरा देते हैं, हथियार फेंक देते हैं; और घुटने टेक लेते हैं। उन्हें समुद्र के किनारे की चट्टान की तरफ ध्यान देना चाहिए। लहरों पर लहरें लगातार उस चट्टान पर टक्करें मारती रहती हैं, पर चट्टान जरा भी नहीं हिलती। इस तरह के अटल धीरज वाले मनुष्य का संकट क्या विगाड़ सकता है? धीर मनुष्य अपने कर्त्तव्य पर लगातार डटा रहता है। संकट की लहर आती है और उससे टकरा कर लौट जाती है।

पहाड़ की ऊँची चोटी की तरह धीर मनुष्य सिर ऊँचा रखता है। रोता-कलपता नहीं, गिड़गिड़ाता



नहीं । मुसीवतों की गर्दन उसके पैरों के नीचे रह जाती है ।

मन की मजबूती का नाम ही धीरज है । मन अटल रहे, तो शरीर अच्छी तरह जीवन-संग्राम में जुटा रहता है, मन हार जाए तो शरीर क्या कर सकता है ?

जिसका हृदय दृढ़ है वह दुःख और संकट को आते ही पछाड़ देता है । उसका पक्का निश्चय उसकी मदद करता है । उसे अपनी जीत का पक्का भरोसा होता है । दब्बू बनकर अपमान सहने की बजाय वह लड़ते-लड़ते मर जाना बेहतर समझता है । जिस तरह लद्दाख के मोर्चे पर भारतीय जवान इंच-इंच जमीन के लिए लड़े, उसी तरह धीर पुरुष भी संकट के सामने सीना तान कर भिड़ जाता है ।

जिस तरह घास के तिनके हवा का एक झोंका लगने से, कांपने लगते हैं, उसी तरह संकट की छाया पड़ते ही अधीर आदमी कांपने लगता है । वह संकट से इतना दुःख नहीं उठाता, जितना कि संकट के भय



उसव  सबसे सगा सम्बन्धी और
तेर है। सहनशीलता के किले
हो समय में कई संकटों से
लेता है, जैसे किले में बैठा एक ही
ार अनेकों का सामना कर लेता है ।

मनुष्य के गुणों में सहनशीलता का बड़ा भारी महत्त्व है। सहदशील व्यक्ति हँसते-हँसते संकट को झेल लेता है। सहनशीलता से व्यक्ति की शक्तियों का विस्तार और विकास होता है। सहनशील व्यक्ति की अपने आप पर आस्था बढ़ जाती है। सहनशीलता से आत्मविश्वास की भावना बढ़ती है। जो मनुष्य दुःख में दुःख नहीं मानता, जो भय का कारण उपस्थित होने पर भी भयभीत नहीं होता, वह संकटों को पार कर जाता है। सुख-दुःख, हानि-लाभ, जय-पराजय में जो व्यक्ति एक समान रहता है, जो विच-लित नहीं होता, वह योगी है।



: ११ :

सरल स्वभाव

एक कवि ने कहा है कि जो मिलने पर सरल बर्ताव करता है, उसके पास बार-बार जाने को जी चाहता है और जो मिलने पर घमण्ड दिखलाता है, उसके पास हमारी बला जाती है।

स्वभाव की सरलता मनुष्य के चरित्र का एक बहुत बड़ा गुण है। 'भोले भाव मिलें रघुराई।' जो घर आये का सम्मान करता है, मीठे वचन बोलकर उसके मन को प्रसन्न करता है, वह बहुत अच्छा आदमी है। शिष्टाचार का अर्थ है शिष्टों जैसा आचरण। शिष्टाचार दूसरों का मन जीतने की कुंजी है। शिष्टाचार शारीरिक सुन्दरता की कमी को पूरा कर देता है। बिना शिष्टाचार के सुन्दरता का कोई मूल्य नहीं।



सरल स्वभाव का मनुष्य सुगंध वाले फूल की तरह होता है। उसकी बातों में फूल झड़ते हैं। उसकी नजर में मिठास भरी होती है। उसकी बातें दूसरों के घावों पर मरहम का काम करती हैं। उसके पास बैठकर आदमी अपने जी को हल्का करता है। थके हुए की थकावट उसके पास बैठने से ही दूर हो जाती है।

तुलसीदास जी ने कहा है—

"साधु स्वभाव राम महतारी"

राम की माता कौशल्या सरल स्वभाव की थी। उसे राम की माता बनने का सौभाग्य मिला।

तुलसीदास जी ने यह भी कहा है—

"मन मलीन तन सुन्दर कैसे
विष-रस भरा कनक घट जैसे।"

सरल स्वभाव का अर्थ बुद्धू होना नहीं है। इसका अर्थ यह है कि छलिया, दूसरों की निन्दा करने वाला, झूठी बड़ाई करने वाला, एक को दूसरे से लड़ाने वाला और मन में खोट रखने वाला न



वनना चाहिए।

सरल स्वभाव इन्सानियत का वड़ा ऊँचा गुण है। यह चरित्र की वहुत वड़ी खूवी है। रंग, रूप, जात-पाँत, नस्ल से कोई मनुष्य अच्छा या वुरा नहीं हो जाता। अच्छा अपने वर्ताव से होता है। सरल वर्ताव में दूसरे का मन मोह लेने का गुण होता है। ईमानदारी, नम्रता, सव की भलाई की इच्छा, मधुर वचन, सरल व्यवहार कुछ ऐसे गुण हैं जिनसे दूसरे का मन वश में हो जाता है, चाहे वह एशियावासी हो, या नीग्रो, अमेरिका का वाशिन्दा हो या यूरोप का।



: १२ :

दुर्बल को न सताइये

दुर्वल को सताना नहीं चाहिए। अपने से छोटे को विना कारण दवाना या दुःख देना बुरा है। मनुष्य ही क्या, पशु-पक्षी को भी विना कारण तंग करना बुरा है। मनुष्य के चरित्र में अहिंसा सव गुणों का निचोड़ है। क्रोध न करना, दूसरें की निन्दा न करना, ऐसा लोभ न करना जिससे दूसरों को कष्ट पहुँचे, किसी को कठोर वचन न कहना, किसी के शरीर या मन को कष्ट न पहुँचाना ही अहिंसा है।

मनुष्य की ऊँची से ऊँची सभ्यता और संस्कृति का सार अहिंसा है। जिनके मन में अहिंसा घर कर गई है, उनके हाथों से, उनके कामों से, उनके वचनों से कभी किसी का नुकसान नहीं होता। वे तो जहाँ तक हो सके, दूसरे की भलाई ही किया करते हैं।



महात्मा बुद्ध, ईसामसीह और गांधी जी अहिंसा के कारण ही मानवमात्र के पूजनीय बन गए। विनोबा भावे भी इसी कारण आज लाखों लोगों के वन्दनीय बने हैं।

अहिंसा का निभाना बहुत कठिन है; पर इससे ऊँचा धर्म या व्रत कोई नहीं है। जो मनुष्य इसमें जितना ही पूर्ण होता जाता है, उतना ही वह ऊँचा चढ़ता जाता है। संसार के सब महान् पुरुष अहिंसा में विश्वास रखते थे।

याद कीजिए कपिलवस्तु के उस राजकुमार को जिसने अपने नन्हे से बच्चे को, सुन्दर पत्नी को और राजपाट को छोड़कर वन में जाकर कठोर तप किया! सारी तपस्या का उसने क्या निचोड़ निकाला?—अहिंसा। स्मरण कीजिए भगवान् महावीर को जिन्होंने संसार में सब कर्मों, व्रतों और नियमों का सार अहिंसा को बताया।

स्मरण कीजिए महात्मा ईसा को! उन्होंने क्या कहा था?—अहिंसा। उन्होंने तो यहाँ तक कहा

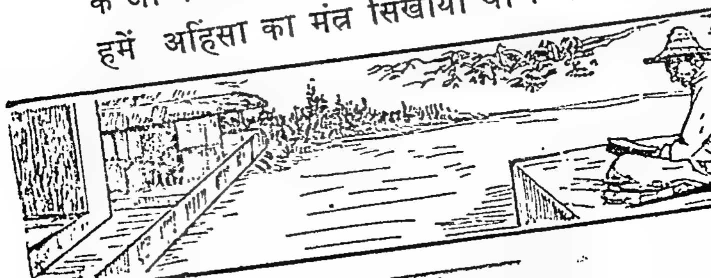


था–"यदि तुम्हारे गाल पर कोई एक थप्पड़ मारे तो दूसरा गाल आगे कर दो।" उन्होंने अपने मारने वालों के विषय में कहा था—"प्रभो ! उनको क्षमा कर दो। वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं।"

और रूस के महान् व्यक्ति टालस्टाय ने अपने जीवन का जो निचोड़ निकाला था, वह था—अहिंसा; और गांधी जी ने कहा था—"यदि हिंसा से मुझे स्वराज्य मिले तो मैं उसे न लूँगा।" और उस नंगे फकीर के आगे बलशाली ब्रिटिश सल्तनत को झुकना पड़ा।

हिंसा का जमाना बीत चुका है। नई मनुष्यता भाईचारा, शान्ति और समानता चाहती है। मनुष्य को इसी के लिए कोशिश करनी है। इन्सानियत की सबसे ऊँची चोटी अहिंसा है। और यही मनुष्य के चरित्र का सबसे ऊँचा आदर्श है।

अहिंसा आत्मानुशासन से ही आती है। आजा[दी] के आन्दोलन-काल में ही हमारे राष्ट्रीय नेताओं [ने] हमें अहिंसा का मंत्र सिखाया था। लाल-बाल-पा[ल]



गोखले, तिलक, मदनमोहन मालवीय, महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू ने हमें अहिंसा के पथ पर चलाया। इसी अहिंसा के बल पर हमने स्वराज्य प्राप्त किया। इतना महान् काम अहिंसा से हुआ तो फिर हम इसे क्यों छोड़ें ?

: १३ :

मूल्य दीजिये

आप किसी वस्तु को चाहते हैं तो उसका मूल्य दीजिए। यदि आप वह मूल्य नहीं देना चाहते तो उस वस्तु की इच्छा भी छोड़ दीजिए। जब आप सौदे का दाम देने को तैयार नहीं, तो जाइये, सौदा नहीं हो सकता।

वेद में मंत्र आया है—"हे ईश्वर ! हमारी महत्त्वाकांक्षाओं को खूब दीप्त कर।" महत्त्वाकांक्षाओं का मोती श्रम से ही मिलता है।

बस यही बात है ! आपको जो कुछ चाहिए, उस का मोल दीजिए। अच्छी खेती चाहिए तो मेहनत कीजिए; जानकारों से अच्छी खेती की विधि पूछिए; अच्छी खाद ढूँढिए; अच्छे बीज डालिए; अच्छी तरह खेती की रक्षा कीजिए।



पढ़ना है तो नियम से पढ़िए, ध्यान देकर पढ़िए; गुरुओं का सम्मान करते हुए पढ़िए। पढ़ने के बाद घर पर जाकर चित्त लगाकर फिर पढ़िए; पढ़े हुए को लिखकर अभ्यास कीजिए।

आपको कलाकार बनना है तो कला के साधन इकट्ठे कीजिए; गुरु ढूँढिए, साधना कीजिए, लगातार मन लगाकर अभ्यास कीजिए। उस कला के जानकारों के पास जाकर बातचीत कीजिए। उस कला के मशहूर फनकारों की कला के नमूने गौर से देखिए।

विज्ञान में आगे बढ़ना है तो वहाँ जाइए जहाँ विज्ञान की क्लासें लगती हैं; हाथों से परीक्षण कीजिए। लीन होकर खोज कीजिए; बड़े-बड़े वैज्ञानिक जो हो गए हैं, उनकी जीवनियाँ पढ़िए, बारीकी से उनकी खोजों और ईजादों को समझने की कोशिश कीजिए।

जब आप किसी वस्तु को खरीदना चाहते हैं तो आपको अपने पास से दाम देना पड़ता है। अपने हाथ से आपको दाम छोड़ना पड़ता है। वस्तु के मूल्य का



त्याग करना पड़ता है।

आप लक्ष्य को पाना चाहते हैं तो उसके लिए मूल्य दीजिए अर्थात् त्याग कीजिए। समय दीजिए, मेहनत दीजिए, ध्यान दीजिए, उसके लिए पैसा खर्च करिये; उसके लिए नम्रता खर्च कीजिये; दूसरों से विनती करके सहायता लीजिए; दूसरों को समझाकर अपने काम की अच्छाइयाँ बताइए।

त्याग के बिना आप अपने लक्ष्य को ग्रहण नहीं कर सकते।

"यहाँ खूब सौदा नकद है
इस हाथ दे उस हाथ ले।"

सफलता के लिए जरूरत दृढ़-संकल्प की है; दृढ़ इच्छा शक्ति की है। कर्म ही सफलता का मूल्य है।

माता बच्चे को पालने के लिए सुखों का त्याग करती है। पिता सन्तान के लिए अपनी कमाई का त्याग करता है। समाज के सेवक सेवा के पीछे अपनी नींद और भूख को भी भूल जाया करते हैं।

जितना बड़ा काम होता है, त्याग भी उतना



ज्यादा करना पड़ता है। यदि काम पूरा नहीं होता है तो इसका कारण त्याग की कमी होती है। जहां त्याग पूरा हुआ, वहां लक्ष्य या मकसद भी पूरा हो जाता है। यही दुनिया की रीति है।

श्रम, कर्म, गति, प्रयत्न, उत्साह और साहस—ये वे गुण हैं जिनसे हरएक काम में सफलता मिलती है।



वात है—"गधे को आप दिन का खाना बनायें, हिरन को रात का खाना और खरगोश को शाम के समय खा लें।"

"वहुत ठीक ! शावाश !" शेर ने कहा और हँसकर वोला—"तुम्हें इतनी बुद्धि किसने सिखाई ?"

नम्रता से झुककर लोमड़ी बोली—"सरकार ! उस भेड़िये ने, जो अभी मारा गया है।"

कहानी में यह बतलाया गया है कि सत्य को ठीक ढंग से न कहने पर हानि होती है।

इसीलिए कहा गया है कि सच बोलिए तो ऐसे ढंग से बोलिए कि प्रिय लगे। लाठी मारने के तरीके से सच नहीं बोलना चाहिए।

लेकिन बहुत से लोग ऐसा ही सच बोलते हैं। वे दूसरों की भूलों को बताने के लिए खूब सच बोलते हैं। वे आपकी गलती को आपके मुँह पर कहने का दावा करते हैं। और इसमें वे अपनी बड़ी बड़ाई समझते हैं। वे आपसे कहेंगे—"भाई! मैं तो सच्चा सीधा आदमी हूँ; लाग-लपेट की वात नहीं करता।"



और इसी आड़ में वे आपको ऐसा नश्तर चुभो देंगे कि आप तिलमिला उठें। ऐसा सच किस काम का ? सच को ऐसे ढंग से बोलना चाहिए जिससे किसी की हानि न हो। यदि सच को आप दूसरे पर चोट करने का वहाना बनाते है, तो वह बुरी बात है।

लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि झूठ बोलना चाहिए। जो झूठ बोलता है, वह दूसरों को धोखा देता है। झूठे व्यक्ति कभी जिम्मेदारी नहीं सँभाल सकते। पहले तो उन पर कोई भरोसा ही क्यों करेगा ? और यदि कोई बातों में आ भी जाए तो वे काम की जिम्मेदारी कैसे निभा सकते है, जिन्हें हर काम में झूठ बोलने की आदत है।

सच बोलिए, लेकिन प्रिय सच बोलिए; किसी पर चोट करने के लिए सच मत बोलिए। प्यारा लगने वाला झूठा वचन भी मत बोलिए।

किसी को गाली मत दो, वृथा न बोलो, चुगली न करो, झूठी खुशामद या प्रशंसा न करो, सदा कम बोलो, दूसरे को जलाने वाला सत्य न बोलो, और



प्रत्येक शब्द को सावधानी से बोलो।

उपनिषदों में लिखा है—"मनुष्य जो कुछ मन से सोचता है, उसे ही वाणी से कहता है; जो कुछ वाणी से कहता है, उसे ही कर्म से करता है; जो कुछ कर्म करता है, उसी का परिणाम उसके सामने आता है।" इसका अर्थ यह हुआ कि हमारे जीवन में वाणी का बड़ा महत्त्व है। वाणी का संयम एक बड़ा गुण है। वाणी सत्य से पवित्र करके बोलनी चाहिए।

कई अवसर ऐसे आ जाते हैं, जब मनुष्य को अवश्य बोलना चाहिए। अन्याय के प्रतिकार के लिए अवश्य बोलना चाहिए। भगवान शंकराचार्य ने कहा है, "जो समय पर युक्तियुक्त बात कहने में असमर्थ है, वह गूँगा है।"



: १५ :

भय को दूर भगाइए

जीवन में मनुष्य को एक शत्रु बहुत सताया करता है। अचानक मन में किसी तरह का भय आ जाता है। वह मनुष्य की शक्ति को हर लेता है। कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं, जिसके ऊपर भय का हमला न होता हो। परन्तु जिसका चरित्र दृढ़ है, वह इस हमले का डटकर मुकाबला करता है। वह अपने मन की मजबूती से भय को काट कर गिरा देता है। दुर्बल चरित्र वाला मनुष्य, वह मनुष्य जिसका मन कमजोर है, डर को अपने मन पर सवार होने देता है।

निर्भयता की भावना से ही लालबहादुर शास्त्री ने पाकिस्तान के आक्रमण का सफलता से मुकाबला किया था। उनकी निर्भयता से सारे देश में निर्भयता



की भावना फैल गई थी।

अनजाने ही किसी विपत्ति का भय मनुष्य के मन में आता है। उससे डरकर मनुष्य उसके मुकाबले के लिए तैयार नहीं होता; बल्कि उसके हाथ-पाँव फूल जाते हैं और जो काम वह पहले करता था, उनके करने की भी उसमें ताकत नहीं रहती। इसी तरह प्रिय वस्तु या प्रिय मनुष्य के बिछुड़ने का भय मनुष्य को सताने लगता है। जिस मनुष्य में भय को काट कर फेंकने का साहस नहीं, उसे चरित्रवान मनुष्य नहीं कहा जा सकता। निर्भयता चरित्र का आवश्यक अङ्ग है। निर्भयता एक बड़ा ऊँचा गुण है। इससे मनुष्य में कमजोरी नहीं आती। इससे मनुष्य अपने कामों पर डटा रहता है। निर्भय मनुष्य जलती आग में दूसरों की जान बचाने के लिए कूद पड़ता है। निर्भय मनुष्य गोलियों की बौछार और बम के धमाके में भी आगे बढ़ता जाता है। निर्भय मनुष्य खतरा उठाकर भी अपना काम करता जाता है।

दुनिया के हरेक काम में चरित्र के इस गुण की



आवश्यकता है। जो निडरता से जीवन में आगे नहीं बढ़ता, वह कभी भी तरक्की नहीं कर सकता। निडरता की जरूरत सिर्फ युद्ध में ही नहीं होती, जीवन के पग-पग पर इसकी आवश्यकता पड़ती है।

कायर आदमी भय के मारे ही मरा जाता है। भय का कारण आने से पहले ही वह दुख उठाने लगता है। मालूम नहीं संकट आयेगा, या नहीं आयेगा, पर कायर के लिए तो उसी समय संकट आ गया। संसार में जिन्होंने बड़े काम किये हैं, वे निडर लोग ही थे। निर्भयता के बल पर राम ने रावण का मुकाबला किया था। निर्भयता के बल पर कृष्ण ने अत्याचारी कंस का नाश किया था। निर्भयता के बल पर बुद्ध ने वन में जाकर तप किया और मृत्यु पर भी विजय पाई। निर्भयता के बल पर महाराणा प्रताप ने अकबर की भारी ताकत के सामने सिर ऊँचा रखा था। निर्भयता के बल पर ही भारत ने अपना स्वाधीनता का युद्ध लड़ा। अंग्रेजों की बड़ी भारी सेनाओं के सामने निहत्थे वीरों ने घमंड से छाती



ानकर कहा—'भारतवर्ष हमारा है'; और अन्त में उन्हें विजय मिली।

किन्तु कायर मनुष्य भय के मारे ही दिन में कई वार मरता है। एक कवि ने कहा है—

कायर तो जीवत मरत, दिन में वार हजार।
प्राण पखेरु वीर के, उड़त एक ही वार॥

कवीर ने भी कहा है—

जा मरने ते जग डरे, मेरे मन आनन्द।
कव मरिहौं कव पाइहौं, पूरन परमानन्द॥

भगवान कृष्ण ने गीता में निर्भयता को सवसे पहली दैवी संपत्ति माना है। उन्होंने मनुष्य के चरित्र का सवसे पहला गुण निर्भयता ही वताया है। कुरुक्षेत्र के मैदान में जव अर्जुन हथियार डालकर वैठ गया, तव कृष्ण ने गीता का उपदेश देकर उसे फिर से काम में लगाया। जव-जव मनुष्य काम करना वन्द कर देता है, जव वह आगे वढ़ने से रुक जाता है, त उसका सवसे वड़ा कारण भय ही होता है। शरीर कष्ट का भय, सम्वन्धियों से विछुड़ने का भय, धन



हानि का भय, मुसीबत आने का भय, संतान के नाश का भय, यश नष्ट होने का भय—सैकड़ों तरह के भय मनुष्य के सामने अनेक रूप धारण करके आते और उसे डराते रहते हैं। भगवान् कृष्ण ने कहा है कि भय का कारण मोह है। जो मनुष्य मोह को छोड़कर निर्भय होकर अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहता है, वही चरित्रवान होता है।

तूफान हो या भूकम्प, बाढ़ हो या अकाल, रोग फैला हो या युद्ध शुरू हो गया हो—निर्भयता को न छोड़ो—

"हम जिये भी तो इस तरह से जिये,
जैसे तूफाँ में जल रहे हों दिये।।"

निर्भयता ही जीवन के प्रति निष्ठा का नाम है। श्रीराम का जीवन निर्भयता का आदर्श है। ऐसे निर्भय व्यक्ति पर लोग मुग्ध हो जाते है। वे उसका काम करने के लिए स्वयं आगे आते हैं। निर्भय व्यक्ति साधारण व्यक्ति में भी वीरता भर देता है।

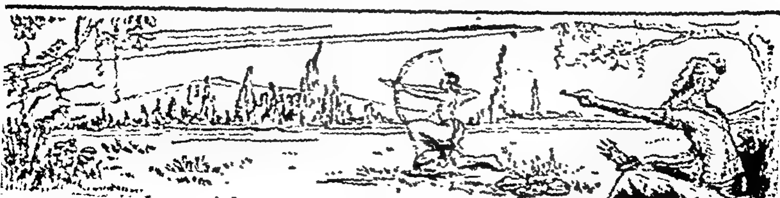


: १९ :

मन की पवित्रता

वैरी अपना मन ही है। यह नीचे की तरफ जाता है। इसे जीतने की कोशिश करनी चाहिए। इसे न्याय में लगाना चाहिए, इसे काम में लगाना चाहिए, इसे ऊँचा उठाना चाहिए, इसे परोपकार में लगाना चाहिए।

मन हमें भोगों में लगाता है। यह आराम-पसन्द है। यह काम से भागता है। दूसरों की निन्दा में इसे मजा आता है। किसी के दोषों को देखकर यह उससे घृणा करता है। अपने दोषों को चतुराई समझता है। कोई नहीं देख रहा, यह सोचकर यह हर तरह के बुरे काम करने को तैयार हो जाता है। परन्तु यदि इसे वश में करके अच्छे कामों में लगाया जाए तो इसकी ताकत बहुत बड़ी है।



इस धरती पर जितना विकास हुआ है, जितनी रचनाएँ हुई हैं, जितने भी कला-कौशल और ज्ञान-विज्ञान फूले-फले हैं, जितने भी वीरता, साहस, पराक्रम, प्रेरणा और स्फूर्ति के काम हुए हैं—वे मन को ऊँचा उठाने से ही हुए है। यदि मन में दृढ़ता है, पवित्रता है, तो इससे बड़े-बड़े काम बनते हैं और यदि मन कमजोर है तो यह बुरे कामों की तरफ ले जाता है। हमारी कथनी और करनी में एकरूपता तभी आ सकती है जबकि हमारा मन वश में हो। मन को वश में करना कठिन है; परन्तु अभ्यास करने से यह सिद्धि प्राप्त हो सकती है। इसीलिए कहा गया है—

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।

जब मन को जीवन के लक्ष्य के साथ जोड़ा जाए तो यह पवित्र बनता है। लक्ष्य को पाने के लिए इसमें बल आता है। तब बुरी भावनाओं को सोचने की इसे फुर्सत ही नहीं मिलती। बुरे भाव आते हैं तो मन उन्हें आप ही दूर हटा देता है।



जब मन बुरे भावों को परे हटा देता है, जब यह कमजोरियों को दूर भगा देता है, जब यह पवित्र और शुद्ध हो जाता है, तो अपने लक्ष्य को पाने की योजनाएँ बनाता है। काम को पूरा करने की तरकीबें सोचता है। अंगों और इन्द्रियों को आराम और भोगों से परे हटाकर उनको उचित कामों में लगाता है। मन की शक्तियाँ अनगिनत और अपार हैं।

संसार की सारी रचनाएँ पहले मन में विचार रूप में आती हैं, फिर इन्द्रियाँ उस विचार को अपने काम से ठोस रूप दे देती हैं। इसलिए मन को वश में करना, उसे पवित्र रखना, उसमें लक्ष्य को पाने की हरदम इच्छा जगाये रखना चरित्रवान का कर्त्तव्य है। जो मन को वश में नहीं रखता, उसका मन चंचल होकर कभी इस इच्छा में, कभी उस इच्छा में दौड़ता है। दुर्बल और चंचल मन मनुष्य को जगह-जगह भटकाता है। वह उसे अपना लक्ष्य नहीं पाने देता।

जो मन पर सवार है, जिसका मन वश में है,



वह अपना काम ठीक समय में पूरा कर लेता है। पवित्र मन वाला मनुष्य ही चरित्रवान है।

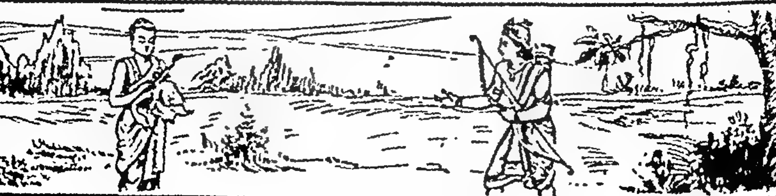
जिस समय मन पवित्र हो जाता है, उस समय इन्द्रियाँ श्रेष्ठ कर्मों में लग जाती हैं। जीवन ऊँचा उठने लगता है। तब शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक उन्नति का मार्ग खुल जाता है। मनुष्य का मन ही बन्धन या मोक्ष का कारण है।



अच्छा बर्ताव कीजिए

अच्छे चरित्र और भक्ति इन दोनों में जो सफल हो जाते हैं, उनके सामने एक खतरा रह जाता है। वह खतरा है अभिमान। जो अभिमान के गढ़े में गिर जाते हैं उनका बर्ताव दूसरों के प्रति कठोर हो जाता है। चरित्र का बाहरी शरीर और रूप-रंग बर्ताव से ही प्रकट होता है।

किसी मनुष्य के भीतरी गुणों का सम्बन्ध अधिकतर उसके अपने आप से होता है। उसके संपर्क में जो लोग आते हैं, वे उसकी पहली परीक्षा तो उसके बर्ताव से करते हैं। यदि उसका व्यवहार शिष्ट है तो वे उसे सच्चरित्र समझते हैं और यदि उसका बर्ताव अच्छा नहीं तो लोग समझते हैं कि उसके चरित्र में कमी है।



शिष्ट व्यवहार बनावटी भी हो सकता है। परन्तु उसकी पोल खुलने में देर नहीं लगती। सच्चे शिष्ट व्यवहार में जो कोमलता और मधुरता होती है, वह दिखावे की नहीं, बल्कि असली होती है।

व्यक्ति जब अपना विस्तार करता है, तब घर से पड़ोस, पड़ोस से समाज और समाज से ... तक अपना कर्मक्षेत्र बढ़ा लेता है। शि... ऐसा मंत्र है जिसके द्वारा वह आगे बढ़ सक...

मनुष्य में चाहे कितने ही गुण हों, ... के साथ शिष्टाचार का मेल न हो, तो ... को चुभने लगते हैं।

कुछ लोग सदाचार को तो ... पर शिष्ट व्यवहार को फिजूल ... परन्तु यदि आपके चरित्र सम्ब... व्यवहार का मेल हो जाता है ... गौरव बढ़ जाता है। शि... आपका सम्मान बढ़ाने ... सकती। यदि आप इ...



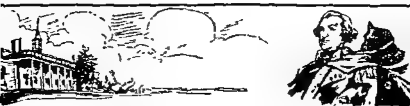
चाहते हैं तो अपना व्यवहार शिष्ट बनाइए।

मनुष्य जब किसी से मिलता है तो उसका दूसरे व्यक्ति पर जो अच्छा या बुरा असर पहली बार में पड़ता है, वह उसके मन में देर तक टिकता है। उस को आसानी से दूर नहीं किया जा सकता। नम्रता, सज्जनता और शिष्टता से भरा बर्ताव करके मनुष्य दूसरे को जितना मुग्ध कर सकता है, उतना और किसी बात से नहीं कर सकता। बर्ताव से ही मनुष्य का जीवन बनता या बिगड़ता है। रूखा बर्ताव और कठोर बातचीत असभ्यता की निशानी है। सज्जनता की मूर्ति शिष्टाचार के धातु से बनती है। शिष्ट व्यवहार का सर्टिफिकेट जीवन में हर जगह काम आता है। मनुष्य के बर्ताव से उसके शौक, उसकी सोहबत, उसका मन और जीवन प्रकट होता है।

हमारी संस्कृति शिष्टाचार पर बड़ा जोर देती है। हमारे सभी विचारक, संत, सुधारक और धर्म-गुरु शिष्टाचार का उपदेश देते रहे हैं। अपने से बड़ी आयु वाले के साथ सद्व्यवहार, माता-पिता-गुरु से



श्रेष्ठ व्यवहार, पास-पड़ौस के व्यक्तियों से शिष्टाचार का वर्ताव, देश के नेताओं के प्रति शिष्टाचार (भले ही वे किसी भी दल के हों), धार्मिक नेताओं के प्रति शिष्टाचार (चाहे वे किसी भी संप्रदाय के हों) आवश्यक है। शिष्टाचार सदाचार की कुंजी है।



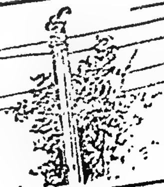
स्थिर-चित्त बनिए

मनुष्य जब अपने मन में आई हर तरह की इच्छाओं को छोड़कर केवल अपने लक्ष्य पर ही ध्यान टिका देता है, तो वह स्थिर-चित्त कहलाता है। फिर उसकी आत्मा अपने अन्दर ही रमी रहती है। उसे दुःख होने पर भी फिर बेचैनी नहीं होती और सुख होने पर अहंकार नहीं होता। मोह, भय और क्रोध को वह जीत लेता है। उसकी बुद्धि लक्ष्य पर टिक जाती है।

स्थिर चित्त वाला मनुष्य अपने लक्ष्य के लिए प्रयत्न करता है। वह लगातार प्रयत्न करता रहता है। यदि उसके प्रयत्न का फल उसकी इच्छा के अनु-सार न भी हो, तो भी वह रोने नहीं बैठ जाता। अपने उपाय, साधन और काम के ढंग की वह अच्छी



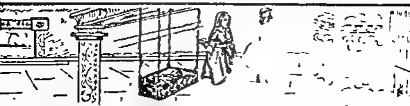




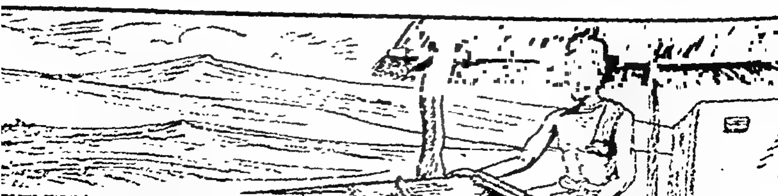
तरह छानबीन करता है और उनकी कमियों को दूर करने का प्रयत्न करता है।

जिस तरह कछुआ अपने अंगों को भीतर सिकोड़ लेता है, उसी तरह स्थिर चित्त वाला मनुष्य अपनी सारी इन्द्रियों को बाहर से हटा लेता है। उस समय उसके मन की सारी शक्ति अन्दर जमा रहती है। उस समय मन की शक्ति खर्च होनी बन्द हो जाती है। इसके बाद जब वह अपनी उस सारी शक्ति को अपने लक्ष्य पर लगाता है तो वह जल्दी ही सफल होने लगता है।

स्थिर-चित्त होना है बड़ा कठिन, क्योंकि बार-बार यत्न करने पर भी इन्द्रियाँ बाहर को दौड़ने लगती हैं। यह खाऊँ, यह पीऊँ, यह छू लूं, यह देखूं, यह सुनूं—इस तरह इन्द्रियाँ झट ललचाती है। वे मन को झट खींचकर अपने साथ ले जाती है। इससे मन अपने काम, अपने लक्ष्य से हट जाता है और मनुष्य का निशाना चूक जाता है और वह अपने काम में असफल हो जाता है। जिसे अपनी इन्द्रियों को वश में



करने का अभ्यास है, वही स्थिर-चित्त हो सकता है। यदि मनुष्य इन्द्रियों के पीछे दौड़ने लगे तो ये उसे इधर-उधर भटकाती हैं। वे असली काम से मुँह मोड़कर भोगों की तरफ लगाती हैं। वे जीवन के उद्देश्य को निकम्मा काम वतलाकर भोग को ही—खाने-पीने-छूने-देखने आदि को ही जीवन का लक्ष्य वताती हैं। इन इन्द्रियों के पीछे दौड़ने वाला मनुष्य सदा यही सोचता रहता है—"अव यह पाया है, अव यह पाऊँ।" लगातार सोचते रहने से वह उसके पीछे वावला हो जाता है। फिर उसके न मिलने से उसे क्रोध होता है। जिस किसी से वह वोलेगा, क्रोध से वोलेगा। ऐसी दशा में वह अपने गुरु, माता, पिता, भाई, वहन, पड़ौसी या अपने अफसर का भी अपमान करने से नहीं चूकता। इसका परिणाम यह होता है कि वे उसके खिलाफ हो जाते हैं और उसकी मदद करना हर तरह से वन्द कर देते हैं। और जीवन की दौड़ में वह कमजोर होकर पिछड़ जाता है। सव तरफ उसकी निन्दा होने लगती है और उससे उसकी



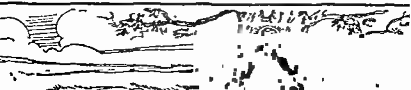
मति मारी जाती है। उसकी पूरी गिरावट होकर रहती है।

इसके विपरीत, जो मनुष्य अपनी हरेक इन्द्री को अपने वश में रखता है, इन्द्रियाँ उसकी मददगार होती हैं। वह उनको अपने मकसद की तरक्की की तरफ जब चाहता है, लगा सकता है। उसका चित्त स्थिर होता है।

जिस समय लोग आराम से पड़े सो रहे होते है, उस समय स्थिर-चित्त मनुष्य अपने काम को पूरा करने में लगा रहता है।

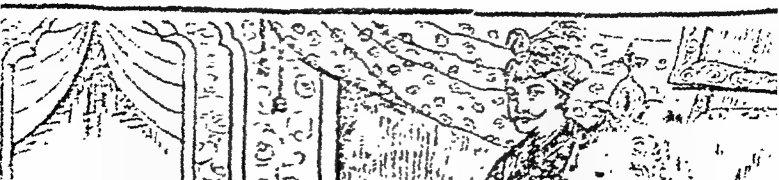
जिस समय और लोग इन्द्रियों के पीछे इस तरह उड़ रहे होते हैं, जिस तरह आंधी में सूखा पत्ता, उस समय स्थिर चित्त वाला मनुष्य अंगद के पाँव की तरह मजबूत पाँवों से खड़ा होता है। बड़े से बड़ा तूफान भी उसे चंचल नहीं बना सकता।

स्थिर चित्त वाला मनुष्य इच्छाओं के पीछे नहीं दौड़ता और जैसे नदियाँ इधर-उधर से आकर समुद्र में मिलती हैं, इसी तरह सफलताएँ सभी दिशाओं से



आकर उसे आप से आप प्राप्त होने लगती हैं। इसीलिए स्थिर चित्त वाला मनुष्य कभी अशान्त नहीं होता। वह सदा शान्त और प्रसन्न रहता है।

विशेषत: विद्यार्थी अवस्था में स्थिर-चित्त होने की नितान्त आवश्यकता होती है। विद्यार्थी अवस्था को हमारी संस्कृति में ब्रह्मचर्यावस्था कहा है। ब्रह्मचर्य मनुष्य-जीवन का आधार है। ब्रह्मचर्य से ही मनुष्य को विद्या प्राप्त करने की शक्ति मिलती है। ब्रह्मचर्य से स्मरण-शक्ति स्थिर, बुद्धि प्रखर और इच्छा-शक्ति बलवती होती है। ब्रह्मचर्य ही उत्साह और साहस की प्रेरणा देने वाली शक्ति है। जो व्यक्ति छात्रावस्था में ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करता, उसकी शारीरिक शक्ति क्षय हो जाती है। उसका मस्तिष्क दुर्बल हो जाता है। उसका चेहरा निस्तेज हो जाता है। ब्रह्मचर्य का अर्थ है जननेन्द्रिय का संयम। ब्रह्मचर्यावस्था जीवन की तैयारी की अवस्था है। इस काल में शरीर की दृढ़ता, विद्या और संस्कृति का अध्ययन ही लक्ष्य होना चाहिए।



आदर्श चरित्र का उदाहरण

हमें अपने सामने किसी आदर्श चरित्र को रखना चाहिए। उस आदर्श चरित्र के गुणों पर ध्यान देने से हम भी उन गुणों को सीख सकते हैं।

एक बार ऋषि वाल्मीकि ने नारद जी से पूछा कि मुझे ऐसा मनुष्य बताइए जिसमें किसी तरह की कमजोरी न हो, जिसका चरित्र पूरी तरह आदर्श हो।

नारद जी ने कहा—"आपने प्रश्न बहुत टेढ़ा पूछ लिया है।" कुछ देर सोचने के बाद नारद जी ने कहा—"ऐसा आदर्श चरित्र वाला मनुष्य राम है।"

वाल्मीकि ने कहा—"जरा उसके चरित्र के गुण भी बता दीजिए।"

हँसकर नारद जी बोले—"उनके गुणों को स्मरण करके बहुत आनन्द होता है। राम के चरित्र में



सबसे पहला गुण यह है कि उसने अपने को वश में कर रखा है। दूसरा गुण उसमें यह है कि वह बहुत वीर है। उसमें तीसरा गुण यह है कि वह तेजस्वी है। चौथा गुण उसमें यह है कि वह धीर है। पाँचवाँ गुण उसमें यह है कि इन्द्रियाँ उसके वश में हैं। छठा गुण उसमें यह है कि वह बुद्धिमान है। सातवाँ गुण उसमें यह है कि वह नीतिवान है। आठवाँ गुण उसमें बोलने की चतुराई है। नौवाँ गुण उसमें यह है कि वह धर्म के सार को जानता है। दसवाँ गुण उसमें यह है कि वह सच बोलता है। ग्यारहवाँ गुण उसमें यह है कि वह जनता की भलाई में लगा रहता है। बारहवाँ गुण उसमें यह है कि वह अपने यश की रक्षा करता है। तेरहवाँ गुण उसमें यह है कि वह हर बात की जानकारी रखता है। चौदहवाँ गुण उसमें यह है कि वह सफाई पसन्द करता है। पन्द्रहवाँ गुण उसमें यह है कि वह ध्यान लगाकर सोचता है। सोलहवाँ गुण उसमें यह है कि वह अपने कर्त्तव्य-पालन में पक्का है। सत्रहवाँ गुण



उसमें यह है कि वह प्राणियों की रक्षा करने के लिए सदा तैयार रहता है। अठारहवाँ गुण उसमें यह है कि वह अपने आदमियों की हर तरह सहायता करता है। उन्नीसवाँ गुण उसमें यह है कि उसने हर तरह की बहुत-सी पुस्तकें पढी हुई है। बीसवाँ गुण उसमें यह है कि उसे हर तरह के शस्त्र-अस्त्र चलाने आते हैं। इक्कीसवाँ गुण उसमे यह है कि वह सबका प्यारा बना रहता है। बाईसवाँ गुण उसमें यह है कि उसकी स्मरण शक्ति (याददाश्त) बड़ी तेज है। तेईसवाँ गुण उसमें यह है कि वह प्रतिभा वाला है। चौबीसवाँ गुण उसमें यह है कि वह बड़ा सज्जन है। पच्चीसवाँ गुण उसमें यह है कि वह सज्जनों को ही अपना संगी-साथी बनाता है। और छब्बीसवाँ गुण उसमें यह है कि वह सबको समान समझता है।''

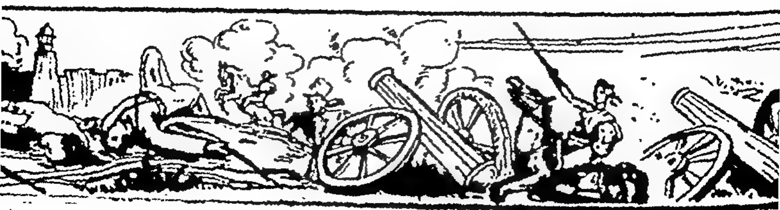
इतना कहकर नारद जी बोले—"अब आप ही बताइये, जिसके चरित्र में इतने गुण हों, वह सबका प्यारा क्यों न हो ?"

शस्त्र चलाने की निपुणता और शासन-प्रबन्ध



की कुशलता के कारण ही रानी लक्ष्मीबाई ने इतनी लोकप्रियता प्राप्त कर ली थी।

ऊपर जो गुण बताये गये हैं, उनके कारण ही राम की पूजा होती है। अपने जीवन में इन गुणों को धारण करने का प्रयत्न करना चाहिए। प्रयत्न करके हम भी अपने को गुणवान बना सकते हैं। गुणी मनुष्य को सब चाहते हैं। सभी उसका सम्मान करते हैं। गुणी ही लोकप्रिय होता है।



: २० :

चरित्र की परीक्षा

अब हमें अपने चरित्र की परीक्षा करनी हो तो नीचे लिखी प्रश्नावली के आगे हमें 'हां' या 'न' लिखते जाना चाहिए और बाद में देखना चाहिए कि 'हां' अधिक हैं या 'न' :—

१. क्या आपका मन अपने वश में है ? ...
२. क्या आप में वीरता है ? ...
३. क्या आप तेजस्वी है ? ...
४. क्या आप संकट में धीरज रखते है ? ...
५. क्या आपकी इन्द्रियाँ आपके वश में है ? ...
६. क्या आप बुद्धिमान हैं ? ...
७. क्या आप में नैतिकता है ? ...
८. क्या आपमें बोलने की चतुराई है ? ...
६. क्या आप धर्म के सार को जानते हैं ? ...



१०. क्या आप सच बोलते हैं ? ...

११. क्या आप जनता की भलाई में लगे रहते हैं ? ...

१२. क्या आप अपने यश की रक्षा करते हैं ? ...

१३. क्या आप हर बात की पूर्ण जानकारी रखते हैं ? ...

१४. क्या आपको सफाई पसन्द है ? ...

१५. क्या आप किसी विषय में पूरी तरह ध्यान लगा कर सोचते हैं ? ...

१६. क्या आप अपने कर्त्तव्य-पालन में पक्के हैं ? ...

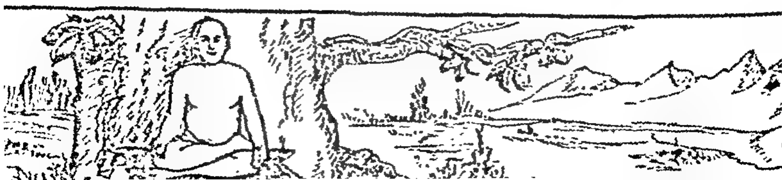
१७. क्या आप प्राणियों की रक्षा के लिए तैयार रहते हैं ? ...

१८. क्या आप अपने आदमियों की हर तरह सहायता करते हैं ? ...

१९. क्या आपने उत्तम पुस्तकें पढ़ी हैं ? ...

२०. क्या आपको हर तरह के अस्त्र-शस्त्र चलाना आता है ? ...

२१. क्या आप सबके प्यारे बनने की कोशिश करते हैं ? ...



ईमानदारी की परीक्षा

नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' या 'ना' में दीजिए। अन्त में विचार करने पर आप अपनी परीक्षा कर लेंगे :—

१. क्या आप सड़क पर पाई वस्तु को अपने पास रख लेते हैं ?
२. क्या आप बिना टिकट यात्रा करते है या तीसरे दर्जे का टिकट लेकर ऊँचे दर्जे में सफर करते है ?
३. क्या आपको कोई उचित से अधिक पैसे दे तो आप उन्हें रख लेते हैं ?
४. क्या आप बस में या और कहीं कतार तोड़कर आगे बढ़ते है ?
५. क्या आप खेल खेलते हुए बेईमानी करते हैं ?
६. क्या आप बीमारी का झूठा बहाना बनाकर




२२. क्या आपकी स्मरण शक्ति तेज है ? ...

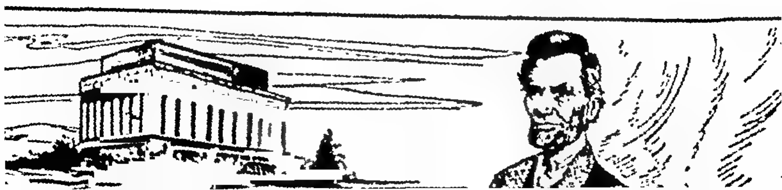
२३. क्या आपमें प्रतिभा है ? ...

२४. क्या आप सज्जन हैं ? ...

२५. क्या आप सज्जनों को ही अपना संगी-साथी वनाते हैं ? ...

२६. क्या आप सब मनुष्यों से समान बर्ताव करते हैं ? ...

प्रत्येक प्रश्न के उत्तर में 'हाँ' का एक अंक है। यदि इन प्रश्नों के उत्तर में आपको १४ अंक से कम मिलते हैं तो आप में कमी है। उस कमी को दूर करने का प्रयत्न अन्य गुणों को प्राप्त करके ही किया जा सकता है। श्रम, प्रयत्न, अनुकरण तथा अभ्यास से आप अपने अन्दर की कमियाँ दूर कर सकते हैं। वह मनुष्य ही क्या जिसमें त्रुटियाँ न हों; परन्तु जो अपनी त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न करता है, वही सच्चा मानव है।



छुट्टी लेते है ?

७. क्या आप किसी से उधार लेकर लौटाना भूल जाते हैं ?

८. क्या आप सरकार को उचित टैक्स देते है ?

९. क्या आप भोला ग्राहक देखकर अधिक दाम वसूल करते हैं ?

इन प्रश्नों को आप वार-वार दोहराएँ और अपने मन में इनके 'अपने' उत्तर सोचें। इससे अपनी ईमानदारी की परीक्षा आप कर सकेंगे और यदि कहीं कोई त्रुटि होगी, तो आपके मन में उस त्रुटि को दूर करने का विचार अवश्य पैदा होगा।

सच तो यह है कि अपने चरित्र को आप स्वयं ही वना या विगाड़ सकते हैं। अच्छे चरित्र से ही जीवन अच्छा वनता है। यदि ग्राप शक्तिशाली ग्रौर प्रभावशाली मनुष्य वनना चाहते है, तो यह वात आपके अपने ही हाथ में है। कोई जवरदस्ती हमें चरित्रवान नहीं वना सकता।

ऊँचे उठना या नीचे गिरना हमारे अपने ही



हाथ में है। हमें क्या बनना है, इसका हमें आप ही निश्चय करना है। जब हम मन में ठान लेंगे कि हमने अपनी कमजोरियों को दूर करना है, यदि हम संकल्प कर लेंगे कि हमने अपने चरित्र और जीवन का उत्तम विकास करना है, तो हम नेक काम करने लगेंगे। जब हम नेक काम करने लगेंगे तो हमारा जीवन आपसे आप ऊँचा उठता जाएगा। जब हमारा जीवन ऊँचा उठता चला जाएगा, तो हमें अपने काम में अनेक सहायक मिलते चले जाएँगे और हमारे काम सफल होते जाएँगे। तब हमारा जीवन सफल होगा। तब हमें यश, सम्मान, शान्ति और समृद्धि प्राप्त होगी।

अपने अन्तःकरण में से ईर्ष्या-द्वेष, क्रोध, मोह, अहंकार, सन्देह, निराशा, अनास्था और तोड़फोड़ की प्रवृत्तियों को दूर हटाइये। इनके स्थान पर—नम्रता सहनशीलता, साहस, कर्मठता, आत्मसम्मान, आत्मविश्वास, विश्वासपात्रता, दयालुता, ईमानदारी, दृढ़ निश्चय, सत्यता एवं अहिंसा जैसे श्रेष्ठ गुणों को अपनाइये।



: २२ :

श्रम का सम्मान

कहा जाता है कि अपनी सहायता आप कीजिए। यह भी कहावत है कि ईश्वर उन्हीं की सहायता करता है, जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं। आज हम श्रम का सम्मान करना भूल गये हैं। 'बाबूपन' हममें ऐसा आ गया है कि छोटे से छोटे काम के लिए भी हम मजदूर या कुली को ढूँढ़ते हैं। हमारे समाज की ऐसी बुरी स्थिति हो गई है कि हम केवल सफेद कपड़े पहनने वाले को 'सम्मानित' समझते हैं। किसान-मजदूर के काम को हम 'घटिया' समझते हैं। मातृभूमि की पवित्र मिट्टी से सने उनके कपड़ों को देखकर हम नाक-भौं सिकोड़ते हैं। क्या इसी का यह परिणाम नहीं कि आज हमारा देश अन्न की कमी के कारण परेशान है और उसे पेट भरने के लिए

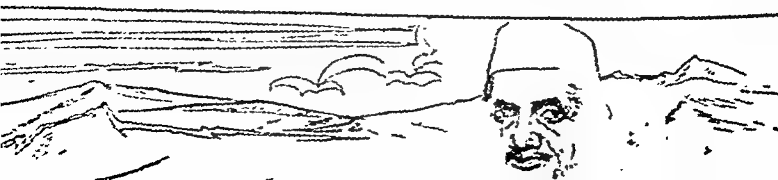


दूसरे देशों से अन्न माँगना पड़ता है। क्या यही कारण नहीं कि हम अभी तक उद्योगों में प्रगतिशील देशों के मुकाबले में सौ साल पीछे हैं ?

जीवन में श्रम का बहुत भारी महत्त्व है। श्रम के बिना कोई भी निर्माण कार्य नहीं हो सकता। मनुष्य के विकास की कहानी निरन्तर श्रम करते रहने की कहानी है। आदिकाल से ही मनुष्य निरन्तर श्रम करता आया है और सारी मानव संस्कृति और सभ्यता श्रम की ही देन है। साधारण जीवन में अस्तित्व को बनाये रखने के लिए प्रत्येक मनुष्य को श्रम करना पड़ता है। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि कर्म अर्थात् श्रम के बिना तो मनुष्य की शरीर-यात्रा भी नहीं चल सकती।

एक श्रेष्ठ गृहस्थ के घर में एक अतिथि आया। घर की सफाई देखकर अतिथि चकित रह गया। उसने गृहिणी से पूछा—"इतनी सफाई कौन करता है ?"

गृहिणी ने कहा—"दो नौकर हैं।"



अतिथि ने कहा—"कहाँ है वे नौकर ? मै उन्हें देखना चाहता हूँ। उन्हें इतनी अच्छी सफाई की समझ कैसे है ? नौकर तो बहुत देखे है; परन्तु इतनी सफाई नहीं देखी ।"

गृहिणी महिला ने मुस्कराते हुए दोनों हाथ दिखला दिये और कहा—"ये हैं वे दो नौकर ! ये कभी भी मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करते । मेरे इशारे पर सारा काम करते है ।"

यह सुनकर अतिथि प्रसन्नता से खिल गया और बोला—"वास्तव में, अपने हाथ जगन्नाथ ।"

जंगल में बया अपना घोंसला बनाता है। अन्य पक्षी भी नीड़ बनाने के लिए श्रम करते हैं। पशु भी अपने लिए बिल, गुफा आदि खोज लेते हैं। परन्तु बन्दर घर बनाने का कभी कष्ट नहीं करता। घनघोर वर्षा में उसे भीगता हुआ देखकर हमें यह शिक्षा मिलती है कि काम से जी चुराने वाले का जीवन बड़ा ही कष्टमय होता है।

मधुमक्खी फूल-फूल पर जाकर मधु संचय करती



है। उसे अपने भोजन की चिन्ता नहीं रहती, क्योंकि उसका भंडार सदा भरा रहता है। चींटी एक-एक दाना एकत्र करके अपने बिल में भंडार भरती रहती है।

इन छोटे-छोटे कीट-पतंगों से भी हमें श्रम की शिक्षा लेनी चाहिए। हमारे सामने अन्न, वस्त्र, मकान, कला और संस्कृति के लिए पदार्थ प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन समस्याएँ आती रहती हैं। क्या हमने कभी सोचा है कि ये सब के सब पदार्थ किसी न किसी के श्रम के ही फल हैं ?

श्रम के बिना कोई निर्माण नहीं, कोई रचना नहीं। श्रम के बिना कोई उपज नहीं, कोई उत्पादन नहीं। फिर हम श्रम का सम्मान क्यों न करें ? हम श्रम का सम्मान करेंगे तो श्रमिक का भी सम्मान करेंगे। तभी हमारे देश का उद्धार होगा। आज एशिया के देशों में जापान बहुत आगे बढ़ गया है। वहाँ हाथ का काम करने को 'गौरव की बात' माना जाता है। वहाँ बालक-बालिका, युवक-युवतियाँ,

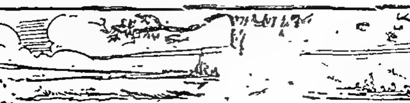


यहाँ तक कि वड़े-वूढ़े भी श्रम को अपना जीवन समझते है।

श्रम का सच्चा सम्मान यही है कि उसे जीवन में सवसे ऊपर समझा जाए। आप घर में स्वयं ग्रपना काम आप करेंगे तो ग्रापको माता का काम हल्का होगा। वे तुम्हे ग्राशीर्वाद देंगी।

श्रम करने में कोई हेठी नही। इससे तो मनुष्य ऊँचा उठता है। वनवास के समय सीता स्वयं अपनी कुटिया वुहारती और पानी भरकर लाती थी। श्रीकृष्ण स्वयं गौएँ चराते थे, गुरु नानक अपना वहुत-सा काम ग्रपने हाथ से करते थे। कवीर कपड़ा वुनते थे। गांधी जी चरखा चलाते थे।

श्रम सवसे वड़ी पूजा और उपासना है। जो अपनी वस्तु को उत्तम से उत्तम वनाने का प्रयत्न करता है, उसका समाज में ग्रादर होना चाहिए।



है। उसे अपने भोजन की चिन्ता नहीं रहती, क्योंकि उसका भंडार सदा भरा रहता है। चींटी एक-एक दाना एकत्र करके अपने बिल में भंडार भरती रहती है।

इन छोटे-छोटे कीट-पतंगों से भी हमें श्रम की शिक्षा लेनी चाहिए। हमारे सामने अन्न, वस्त्र, मकान, कला और संस्कृति के लिए पदार्थ प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन समस्याएँ आती रहती हैं। क्या हमने कभी सोचा है कि ये सब के सब पदार्थ किसी न किसी के श्रम के ही फल हैं ?

श्रम के विना कोई निर्माण नहीं, कोई रचना नहीं। श्रम के विना कोई उपज नहीं, कोई उत्पादन नहीं। फिर हम श्रम का सम्मान क्यों न करें ? हम श्रम का सम्मान करेंगे तो श्रमिक का भी सम्मान करेंगे। तभी हमारे देश का उद्धार होगा। आज एशिया के देशों में जापान बहुत आगे बढ़ गया है। वहाँ हाथ का काम करने को 'गौरव की वात' माना जाता है। वहाँ वालक-वालिका, युवक-युवतियाँ,



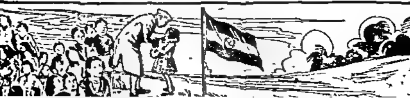
बरसों से काम करता चला आ रहा हूँ। ये छोटे सिवाय खाने के कोई काम नहीं करते। मैं जोर नहीं लगाता। इन्हें भी तो कुछ करना चाहिए।'

मँझले ने सोचा—'वाह जी, बड़ा भाई समझता है मेरा आदर होना चाहिए और छोटा समझता है कि वह अभी बच्चा है। आखिर मुझे ही हर काम करना पड़ता है। मैं तो जोर नहीं लगाऊँगा।'

छोटे ने सोचा—'अभी मेरे खेलने-कूदने के दिन हैं, और बच्चे खेल रहे है, पर बापू मुझे काम पर लगाये रखना चाहते है। मै तो जोर नही लगाऊँगा।' सब इसी प्रकार अपने-अपने मन में सोचने लगे।

जब छप्पर न उठा, तो घर का स्वामी अपनी पत्नी और लड़कों के मन की भावना ताड़ गया। उसने उन सबको समझाया। फिर जब सभी ने मिलकर जोर लगाया तो तुरन्त छप्पर दीवारों के ऊपर पहुँच गया।

एक बहेलिये ने जंगल में अन्न बिखेरकर अपना जाल फैलाया। कबूतरों की एक टोली उस जाल में

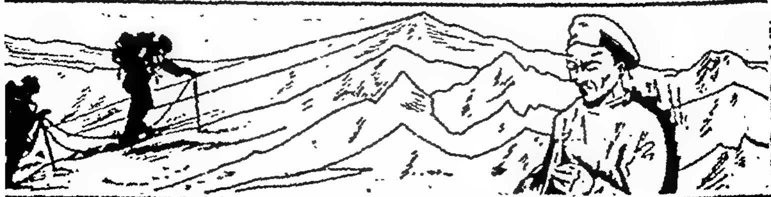


: २३ :

सहयोग या सहकारिता

एक गाँव में एक परिवार था। वर्षा के कारण उस परिवार का छप्पर गिर गया। घर के स्वामी ने बड़े परिश्रम से दुबारा छप्पर बनाया। अब समस्या यह थी कि उसे उठाकर कैसे दीवारों के ऊपर रखा जाए !

घर के स्वामी ने अपनी पत्नी तथा तीनों पुत्रों को बुलाया और बोला—"आओ सब मिलकर जोर लगायं और इस छप्पर को उठाकर ऊपर रख दें।" सब मिलकर जोर लगाने लगे। गृहिणी के मन में आया—'मैं ही क्यों हर जगह मरूँ? घर का तो सारा काम करती ही हूँ। अब यह इनका काम है।' यह सोचकर उसने छप्पर को पकड़े रखा; परन्तु जोर न लगाया। इसी तरह बड़े लड़के ने सोचा—'मैं



वरसों से काम करता चला आ रहा हूँ। ये छोटे सिवाय खाने के कोई काम नहीं करते। मै जोर नहीं लगाता। इन्हें भी तो कुछ करना चाहिए।'

मँझले ने सोचा—'वाह जी, बड़ा भाई समझता है मेरा आदर होना चाहिए और छोटा समझता है कि वह अभी बच्चा है। आखिर मुझे ही हर काम करना पड़ता है। मैं तो जोर नही लगाऊँगा।'

छोटे ने सोचा—अभी मेरे खेलने-कूदने के दिन हैं, और बच्चे खेल रहे है, पर बापू मुझे काम पर लगाये रखना चाहते है। मैं तो जोर नहीं लगाऊँगा।' सब इसी प्रकार अपने-अपने मन में सोचने लगे।

जब छप्पर न उठा, तो घर का स्वामी अपनी पत्नी और लड़कों के मन की भावना ताड़ गया। उसने उन सबको समझाया। फिर जब सभी ने मिलकर जोर लगाया तो तुरन्त छप्पर दीवारों के ऊपर पहुँच गया।

एक बहेलिये ने जंगल में अन्न बिखेरकर अपना जाल फैलाया। कबूतरों की एक टोली उस जाल



फँस गई। बहेलिये को आते देखकर कबूतरों के राजा ने कहा—'अरे रे ! यमराज आ रहा है। इकट्ठे जोर लगाओ और जाल को ले उड़ो।'

कबूतरों ने एक साथ जोर लगाया और वे जाल को ले उड़े। यदि वे परस्पर सहयोग न करते तो शिकारी के हाथ में पड़कर सभी मारे जाते।

सहकारिता से हमारी शक्ति वहुत वढ़ जाती है। किसी ने सच ही कहा है कि एक एक और दो ग्यारह। जो अपने को शून्य समझता है, वह भी जब एक के साथ भली भाँति सहयोग करे तो शक्ति दस गुनी वढ़ जाती है।

अकवर-वीरवल के किस्सों में एक किस्सा है कि वादशाह ने एक तालाव वनवाया और डौंडी पिटवा दी कि सव लोग एक-एक लोटा दूध उस तालाव में डाल दें। सवेरे उठकर अकवर क्या देखता है कि तालाव पानी से भरा पड़ा था। वात यह हुई कि हरेक ने यही सोचा—"और तो सभी दूध का लोटा डालेंगे ही; मैं पानी डालूँ तो कौन देखता है?"



वस यही कमी हममें है, जिसे हमने दूर करना है। सहकारिता और सहयोग का यही तात्पर्य है कि सब लोग अपनी अधिक से अधिक शक्ति लगाकर और दूसरों के साथ मिल-जुलकर काम करें।

जिस प्रकार हमारे शरीर के सब अंग परस्पर सहयोग से काम करते हैं तो हमारा जीवन चलता है, उसी प्रकार समाज में सभी लोग सहकारिता से, सहयोग से, तालमेल से काम करें, तभी समाज की उन्नति होती है। जिस समाज में सहकारिता की भावना अधिक होती है, वह अधिक प्रगति करता है। इसके विपरीत जिस समाज के लोग 'मैं-मैं' के अभिमानी अर्थात् व्यक्तिवादी होते है, राष्ट्रों की दौड़ में वह समाज पिछड़ जाता है।

कहावत है कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। व्यक्ति-व्यक्ति की शक्ति जब किसी काम में इकट्ठी लगती है तो वह काम अवश्य पूरा होता है। जब जनता-जनार्दन किसी काम को सहकारिता से करे, तभी राष्ट्र का महान् काम पूरा होता है।



: २४ :

देशभक्ति

जब श्रीराम रावण पर विजय प्राप्त कर चुके, तो लक्ष्मण बोले—"भाई ! यह लंका बड़ी सुन्दर है, स्वर्णमंडित है। हम क्यों न यहीं रहें ?"

तब श्रीराम ने कहा था—

"अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते ।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ॥"

हे लक्ष्मण ! यद्यपि यह लंका स्वर्णमयी है; परन्तु मुझे यहाँ रहना प्रिय नहीं लगता; क्योंकि माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर श्रेष्ठ हैं।

यह है देशभक्ति का आदर्श ! हमारे देश की प्राकृतिक स्थिति और शोभा बड़ी अद्भुत है। यहाँ हिमालय की ऊँची चोटियाँ भी हैं, गंगा-यमुना के मैदान भी हैं, राजस्थान की मरुभूमि भी है और



समुद्रतटवर्ती प्रान्तर भी है। यही एक परम सौभाग्यशाली देश है, जहाँ छः ऋतुएँ समय-समय पर आती हैं और अपनी-अपनी विशेषताएँ दिखला जाती हैं।

प्रकृति की निराली छटा के अतिरिक्त यह देश अपनी संस्कृति और सभ्यता के कारण भी प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है। मनु महाराज ने कहा है—

"एतद्देश-प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥"

पुराने समय में इसी देश में उत्पन्न लोगों के चरित्र से पृथ्वी के सब मानव अपने-अपने लिए चरित्र की शिक्षा लेते थे।

जब ऐसा हमारा महान् देश है तो हम उससे प्यार क्यों न करें? क्यों न हम उसकी सेवा का व्रत लें? क्यों न हम इस देश के सभी निवासियों का सम्मान और आदर करें? चाहे कोई व्यक्ति किसी जाति का हो या किसी मत को मानने वाला हो, उसका आदर और सम्मान करना हमारा कर्त्तव्य है। यदि हम



ऐसा नहीं करते तो चरित्र से पतित होते हैं। राष्ट्रीय एकता के लिए हमें जाति, धर्म, वेशभूषा, भाषा, प्रदेश आदि के भेदभावों को एकदम भुला देना होगा। तभी हमारी देशभक्ति सच्ची देशभक्ति होगी। अपने देश में सर्वधर्म समभाव और विदेशों के बारे में पंचशील को अपनाकर ही हम सच्चे देशभक्त बन सकते हैं।

: २५ :

कुछ सूक्तियाँ

(पढ़िये और मनन कीजिये)

१. व्यवहार वह दर्पण है, जिसमें प्रत्येक मनुष्य अपना प्रतिबिम्ब दिखाता है।

२. सर्वाधिक सुखी समाज वह है, जिसमें हरएक व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति हार्दिक सम्मान की भावना रखता है।

३. कायर तभी धमकी देता है जब वह सुरक्षित होता है।



४. दुखी हृदय के लिए आत्मीयता की एक नजर कुबेर के खजाने से भी अधिक मूल्यवान् होती हैं।

५. चरित्र संग-साथ में विकसित होता है और वुद्धि एकान्त में।

६. जिन्दगी का हर कदम सिखलाता है कि कितनी सावधानी की आवश्यकता है।

७. जो अपने ऊपर शासन नहीं करेगा, वह हमेशा दूसरों का गुलाम रहेगा।

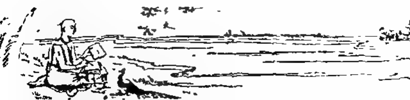
८. कठिनाइयाँ हमें आत्मज्ञान कराती हैं। वे हमें दिखा देती हैं कि हम किस मिट्टी के बने हैं।

९. हृदय की विशालता ही उन्नति की नींव है।

१०. महान् उद्देश्य की प्राप्ति करने के प्रयत्न में जो आनन्द है, वही सच्चा और वास्तविक आनन्द है।

११. आदमी का व्यक्तित्व उसकी कमाई है।

१२. सच्चा अहसान वह है, जो करके भुला दिया गया है।



१३. प्रसन्न रहने से मस्तिष्क में अच्छे विचार उत्पन्न होते हैं और मन शुभ कामों में लगा रहता है।

१४. जीवन को शक्ति-सम्पन्न बनाने के लिए तीन बातें आवश्यक हैं— आत्मविश्वास, आत्मज्ञान और आत्मसंयम।

१५. आदमी जितना महान् होगा, उतना ही नम्र होगा।

१६. कभी शिकायत मत करो, कभी सफाई न दो।

१७. किसी व्यक्ति को उसके प्रति की गई मेहरबानी की याद दिलाना और इसका जिक्र करना गाली देने के समान है।

१८. केवल भले न बनो, कुछ भलाई भी करो।

१९. उधार वह मेहमान है, जो एक बार आकर जाने का नाम नहीं लेता।